लेखिका—
कुमारी विद्यावती मालविका
आवरण शिल्पी—
काजिलाल



आवृत्ति—
प्रथम—नवम्बर १९५७
मूल्य— तीन रुपया मात्र



प्रकाशक—
ओम्प्रकाश बेरी
हिन्दी प्रचारक पस्तकालय
पो० वॉ० न० ७०, ज्ञानवापी,
वाराणसी—१



मुद्रक—
श्रीकृष्णचन्द्र बेरी
विद्यामन्दिर प्रेस (प्राइवेट) लि०,
डी० १५/२४, मानमन्दिर,
वाराणसी

# अनुक्रमणिका


| | पृष्ठ |
|---|---|
| १—आमुख | ३ |
| २—भूमिका | ९ |
| ३—बौद्ध-युग और कला | ३५ |
| ४—उज्जैनी | ३७ |
| ५—माहिष्मती | ४३ |
| ६—कसरावद | ४७ |
| ७—गल्लाकेन्द्र धमनार की गुफायें | ४९ |
| ८—चम्पावती | ५१ |
| ९—उर्वशी के तट पर | ५४ |
| १०—पारा के पुलिन पर | ५८ |
| ११—रेजडिया भोप | ६० |
| १२—राजपुर | ६५ |
| १३—ग्यारसपुर के अंचल में | ६७ |
| १४—विदिशा के परिवेश में | ७० |
| १५—साँची | ७२ |
| १६—मलुनिगाम की निवाण स्थली | ७८ |
| १७—खजुराहो | ८१ |
| १८—भद्रायनी | ८४ |
| १९—मान्या में बौद्ध-धर्म के अवशेष | ८७ |

पृष्ठ

२०—मालवा के बौद्ध साहित्यिक ८९

२१—बौद्ध महिलाओ की निर्मल प्रेरणा ९४

२२—परिशिष्ट—राजपूत-कला कृतियाँ १००

२३—मुस्लिम युग की ऐतिहासिक स्थलियाँ १०६



# आमुख

विषण्ण-वदन पर चिन्ता की रेखा स्पष्ट हो रही थी, अलकें बिखर रही थी, मानो व्याकुल सुकुमारी-सी संस्कृति साकार होकर भगवान् बुद्ध के अवतरण-अवधि की रेखाओं को गिनती शून्य-पथ पर प्रतीक्षा कर रही थी। उसी समय, आज से लगभग ढाई-हजार वर्ष पूर्व लुम्बिनी के पावन शाल-वन में महारानी महामाया के शिशु के रूप में करुणा-निधि अवतरित हुए। महाप्रजापति गौतमी के स्नेह में सिद्धार्थ के जीवन का प्रथम प्रहर पूर्ण हुआ। मधुऋतु-सी वधूरानी यशोधरा देवी ने सौन्दर्य एव गुणों की सजीव प्रतिमा बनकर कपिल-वस्तु के राज-भवन में प्रवेश किया। उनसे राहुल जैसे शिशु को पाकर कपिलवस्तु आनन्द-विभोर हो गया। किन्तु, विश्व-कल्याण के हेतु कपिल-वस्तु के हृदय-देव सिद्धार्थ कुमार ने नवजात शिशु, प्रणयिनी प्रिया तथा राज-वैभव को त्याग दिया। अर्ध-रात्रि की नीरव वेला में उन्होंने महाभिनिष्क्रमण कर अनोमा नदी को पार किया और मगध में उरुवेला के वन्य प्रान्त में कठिन तपस्या की। और, उसी महान तपस्वी ने भगवान् बुद्ध बनकर ऋषिपतन जा धर्म-चक्र-प्रवर्तन किया। तब, प्राणि-मात्र को करुणा एव मैत्री का प्रशस्त वरदान मिला। मगध, कोशल, कौशाम्बी और मालव ही क्या, समस्त भारत को विपत्ति में त्राण मिला। साथ ही, मोक्ष का पथ भी।

तथागत के जीवन-काल तथा उनके पीछे की अवंति-नरेश चण्ड प्रद्योत, महाराजा बिम्बिसार, सम्राट देवानांप्रिय अशोक और कनिष्क के बौद्ध-युगीन भारत में स्तूप, विहार, स्तम्भ, तोरण-द्वार और

भव्य प्रतिमाओं के रूप में श्रद्धा-भावना तथा उत्कृष्ट कला-साधना निखर गई। उस युग में सूत्रों एवं वन्दना के स्वरों से भारत को अद्भुत शान्ति प्राप्त हुई। अगरु-धूम की श्याम लहरियों के मध्य उपदेशों ने शील-पालन की प्रेरणा दे जीवन को धन्य बना दिया।

बौद्ध संस्कृति, कला-कृतियाँ और निर्मल भावनाओं हिमकिरीटनी भारत-भूमि के अञ्चल से विश्व को प्राप्त हुई। सम्प्रति उनकी पुण्य स्मृतियों को सजोई कला-कृतियाँ चीन, जापान, श्याम, सिंहल, बर्मा, तिब्बत आदि सुदूर देशों में भी विद्यमान हैं, जिन म से कुछ पावन स्थलियाँ अति प्रसिद्ध हैं। भारत में भी लुम्बिनी सारनाथ, बुद्धगया, कुशीनगर, राजगृह, अजंता, उज्जैन, सांची आदि सर्व विदित बौद्ध-कला-केन्द्र हैं। कुछ ऐसे भी स्थल हैं जिनके गर्भ में छिपे हुए कला-आगार अतीत के गौरवमय इतिहास को लिये हुए समय की प्रतीक्षा कर रहे हैं। और, कुछ ऐसे भी कला-केन्द्र हैं। जो नितान्त ध्वसित हो अपने वैभव के इतिहास को विस्मृत कर चुके हैं। इन कला-केन्द्रों का इतिहास विवरण तथा दर्शन मात्र हृदय को श्रद्धा-विभोर कर देता है। उनके सम्बन्ध में कुछ लिखना उनके प्रति अपनी हार्दिक श्रद्धाञ्जलि समर्पित करना है।

एक दीर्घ-काल से सारनाथ से प्रकाशित होने वाले मासिक पत्र "**धर्म-दूत**" में मेरी कवितायें, कहानियाँ और लेख प्रकाशित होते रहे हैं। बौद्ध-धर्म सम्बन्धी पुरातत्व के संबंध में लिखने की प्रेरणा प्राप्त कर मैंने एक लेख-माला, बौद्ध-कला-कृतियों के संबंध में प्रारम्भ की। लेखों के प्रकाशित होते रहने से मेरा उत्साह सदा बना रहा। श्रद्धेय भिक्षु धर्मरक्षित जी ने (अपरिचित होते हुए भी) मेरे उत्साह

वद्धि में महायता की। अत मैं उनकी कृतज्ञ हूँ। मैंने मध्य-भारत, विन्ध्य-प्रदेश, एव मध्य-प्रदेश के कुछ बौद्ध-कला-केन्द्रो के सम्बन्ध में लेख लिखे। बौद्ध-कला-कृतियो के उत्कृष्ट प्रतीको को ही मैंने अपने इस लेख-माला मे स्थान दिया।

यह सग्रह उसी लेख-माला का ग्रथ-रूप है। इनमें बौद्ध-कला-कृतियों के अतिरिक्त दो लेख ऐसे भी हैं जिनका सम्बन्ध मुस्लिम एव राजपूत कलाकृतियों से है। मैंने इतिहास तथा पुरातत्व प्रेमियो के लाभार्थ इन्हें भी दे दिया है। प्रारम्भ में मैंने कुछ विस्तृत जानकारी के लिये भूमिका भी लिख दी है। आशा है उससे पाठको को विशेष लाभ होगा।

उज्जैन
बुद्ध-पूर्णिमा १४६६

—कुमारी विद्या

# भूमिका

बुद्ध-काल (ईस्वी पूर्व ६२३-५४३) में जम्बू द्वीप १६ महा-जनपदों में विभक्त था। जिनमें काशी, कोशल, अंग, मगध, वज्जी, मल्ल, चेदि, वत्स, कुरु, पंचाल, मत्स्य, शूरसेन, अश्वक, अवन्ति, गन्धार और कम्बोज की गणना होती थी। अपरान्तक, दक्षिण-पथ और प्राच्य प्रदेश ऐसे भाग थे जिनका विभाजन जनपद के रूप में न होकर, प्रदेश के रूप में हुआ था। त्रिपिटक, पालि एवं अट्ठकथा ग्रन्थों में मध्य-मंडल की सीमा इस प्रकार वर्णित है—

"पूर्व दिशा में कजंगला निगम[1] पूर्व दक्षिण में सललवती नदी[2] दक्षिण में श्वेत-कर्णिक-निगम[3], पश्चिम में थूण नामक ब्राह्मणों का ग्राम[4] उत्तर में उशीरध्वज पर्वत।"[5]*

इस क्षेत्र अवन्ती, महाकोशल, अश्मक आदि कतिपय जनपद नहीं पड़ते थे। फिर भी अट्ठकथा ग्रन्थों में जहां जनपदों का वर्णन किया गया है वहां गान्धार एवं कम्बोज जनपदों को छोड़ कर शेष सभी मध्य-मंडल में गिनाये जाते हैं। यहां यह उल्लेखनीय है कि बुद्ध-काल में भारत ३ मंडलों और ५ प्रदेशों में विभाजित

---

१. वर्तमान कंकजोल जिला संथाल-परगना (बिहार)।

२. वर्तमान सिलई नदी (हजारी बाग और मेदिनीपुर जिला)

३. हजारीबाग जिले में कोई स्थान।

४. वर्तमान थानेश्वर जिला करनाल।

५. हरिद्वार के आसपास कोई पर्वत।

* विनय-पिटक ३, ५

था। मध्यमडल उसका सर्वाधिक समृद्ध एव कला कृतियो का मनहर आगार था।

हम देखते है कि भगवान्-वुद्ध ने उरुवेला में वोधिवृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् कुशीनारा में महापरिनिर्वाण लाभ तक अपने जीवन के ४५ वर्षों तक उपरोक्त मध्य-मडल की सीमा के अन्तर्गत ही विचरण करने में व्यतीत किये थे। यद्यपि भगवान् वुद्ध पद-चारिका करते हुए अवन्ति, अश्वक आदि जनपदो में नही गये थे तथापि उनके शिष्यो ने अवन्ति, चेदि आदि प्रदेशो से लेकर गोदा-वरी के तीर तक धर्म-प्रचार किया था। पुण्योवाद–सुत्त[1] की अट्ठकथा से विदित होता है कि भगवान् वुद्ध आयुष्मान पूर्ण की प्रार्थना स्वीकार कर सूनोपरान्त प्रदेश में भी गये थे। जाते समय मार्ग में उन्होने अपने पदचिह्न नर्मदा के पुलिन और सत्थवदु पर्वत पर बनाया था। जो दीर्घकाल तक एक महान के तीर्थ के रूप माना जाता था। सम्प्रति उनके प्राक्चिह्न विन्ध्याचल पर्वत एव नर्मदा के पुलिन में अवश्य ही विद्यमान होगे। वावरी की शिष्य परम्परा तथा महाकात्यायन एव उनके शिष्यो ने वतमान मध्य-भारत-महामालव) प्रदेश, मध्य-प्रदेश एव विन्ध्य-प्रदेश में धर्म-प्रचार कर अनेकानेक चैत्य तथा स्तूपो का निर्माण करवाया।

सम्राट देवानाप्रिय अशोक के समय में इन प्रदेशो में वौद्ध-धर्म-प्रचार की निर्मल, शान्तिमयी श्रोतस्विनी प्रवाहित हुई थी। उस काल में वहुसख्यक स्तूपो एव विहारो का निर्माण हुआ था। अशोक के धर्म प्रचार के इतिहास पर दृष्टिपात करने से

१ मज्झिम निकाय ३, ५, ३ और सयुक्त निकाय ३४, ४, ६

विदित होता है कि महिष्मक मंडल जिसे आजकल महेश्वर (इन्दौर राज्य) कहते हैं और जो विन्ध्याचल तथा सतपुड़ा की मनोहारिणी पर्वत माला के अंक में स्थित है। वहाँ धर्मप्रचारार्थ महादेव स्थविर भेजे गये थे। उन्होंने वहा धर्म का जयघोष किया। उनके पश्चात् उस प्रदेश में धर्म की श्रीवृद्धि ही होती रही। इस प्रकार अशोक काल तक मध्यभारत, मध्यप्रदेश एव विन्ध्यप्रदेश का विस्तृत भू-भाग जो कभी भारतीय संस्कृति का महान केन्द्र बना, भिक्षुओं के काषाय वस्त्रो एवम् उपासक-उपासिकाओं के शीलपालनपूर्ण निर्मल चरित्रो तथा तथागत की पावन प्रतिमाओं की परिशुद्ध आभा से आलोकित था। यहाँ मैं इन तीनों प्रदेशों के सम्बन्ध में अलग अलग लेखों में कुछ प्रकाश डालना आवश्यक समझती हूँ।

## मध्यभारत

वर्तमान मध्यभारत अवन्ति जनपद में पड़ता था जिसकी राजधानी उज्जैनी थी, जो अच्युतगामी बनाई गई थी। यह जनपद दो भागों में विभक्त था। उत्तरी भाग की राजधानी उज्जैनी में थी और दक्षिण भाग की माहिष्मती में।

दीघनिकाय महागोविन्द सुत्त के अनुसार अवन्ति जनपद की राजधानी माहिष्मती थी। वहाँ का राजा वेस्सभू था। यहीं यह भी वर्णन आता है कि भगवान् बुद्ध की महागोविन्द नामक ब्राह्मण हुए थे और उन्होंने ही सम्पूर्ण जम्बू द्वीप को सात भागों में विभक्त किया था। सत्तभू ब्रह्मदत्त, वेस्सभू भरत, रेणु और दो धृतराष्ट्र— उस समय जम्बूद्वीप के ये सात भारत[1] (राजा) थे। यदि जम्बू-

१. दीघनिकाय २, ६

कथाओ एव मूल त्रिपिटक से यह भी ज्ञात होता है कि बुद्ध-काल से पूर्व और भारत मे जनपद युग के प्रारम्भिक काल में अवन्ति (मध्यभारत) की राजधानी माहिष्मती ही थी। उज्जैन का महत्त्व पीछे बढा। और शिप्रा (क्षिप्रा नदी) तट पर अवस्थित उज्जैन का रमणीक एव धन-धान्य से सम्पन्न नगर माहिष्मती का केवल स्थान ही ग्रहण किया प्रत्युत सारे जम्बू द्वीप का महत्त्वपूर्ण एव वैभव सम्पन्न नगर हो गया। धम्मपदट्ठ[1] कथा से विदित होता है कि बुद्ध-काल से कुछ पूर्व ही अवन्ति जनपद की राजधानी उज्जैन नगर हो गया था। चड प्रद्योत के पूर्वजो ने इस नगर को अपने वैभव एव कलापूर्ण प्रासादो से सम्पन्न कर दिया था। चण्ड प्रद्योत के समय में उज्जैन और उसका अचल प्रदेश बडा ही समृद्ध था। चण्ड प्रद्योत अपने शौर्य के कारण अपने जनपद को बाह्य आक्रमणो से सदैव सुरक्षित रखा। एक समय ऐसा था जब कि मगध नरेश बिम्बसार एव कोशल नरेश प्रसेनजित जैसे पराक्रमी प्रजेश भी चण्ड प्रद्योत के नाम से काँप उठते थे। राजा चण्ड प्रद्योत (पज्जोत) अपने नाम के अनुसार बडा ही चड था। फिर भी उसने अपने समीपवर्ती तथा भारत के सभी छोटे एव बडे गण-राज्यो तथा राजतन्त्रो से मैत्री सम्बन्ध बनाये रखा था।

विनयपिटक[2] के चीवर-स्कन्ध[3] में आये हुए चड-प्रद्योत के रुग्ण होने के विवरण से उसके स्वभाव एव आचरण सम्बन्धी कुछ

---

१ धम्मपदट्ठ कथा २, १

२. विनय-पिटक ३, ८ १, १

३ विनय-पिटक ३, ८, ११

बातों का ज्ञान होता है। विनय-पिटक का वर्णन इस प्रकार है—

"राजा प्रद्योत को पाण्डुरोग हुआ था। बहुत से बड़े बड़े दिगन्त विख्यात वैद्य आकर निरोग न कर सके। बहुत-सा हिरण्य (अशर्फी) लेकर चले गये। तब राजा प्रद्योत ने राजा मगध श्रेणिक बिम्बसार के पास दूत भेजा—

'देव! मुझे ऐसा रोग है। यदि देव! जीवक वैद्य को आज्ञा दें कि वह मेरी चिकित्सा करे तो बड़ा उत्तम हो।'

तब राजा बिम्बसार ने जीवक को आदेश दिया—"जाओ, भणे जीवक! उज्जैन (उज्जैनी) जाकर, राजा प्रद्योत की चिकित्सा करो।"

'अच्छा, देव!' कह जीवक उज्जैन जाकर, राजा प्रद्योत (पज्जोत) के समीप गया। जाकर प्रद्योत के विकार को पहिचान कर बोला—

'देव! घी पकाता हूँ। उसे पीयें।"

"भणे जीवक! बस, घी के बिना और जिससे तुम निरोग कर सको, उसे करो। घी से मुझे घृणा है।"

तब जीवक के मन में ऐसा विचार हुआ—'इस राजा का रोग ऐसा है कि बिना घी के अच्छा नहीं किया जा सकता। क्यों न मैं घी को कषाय-वर्ण, कषाय-गन्ध, कषाय-रस पकाऊँ।' तब जीवक ने नाना औषधों से कषाय-वर्ण, कषाय-गन्ध, कषाय-रस घी को पकाया। उसके मन में इस प्रकार विचार हुआ—'राजा को घी पीकर पचते समय उल्टी होगी तो जान पड़ेगी। यह

राजा क्रोधी (चड) है। मुझे मरवा न डाले। क्यो न मैं पहले से ही ठीक कर लू।" तव उसने जाकर राजा प्रद्योत से कहा—"देव! हम लोग वैद्य हैं। विशेप मुहूर्त से मूल उखाडते हैं और औपधि सग्रह करते है। अच्छा होता, यदि देव! वाहन-शालाओ और नगर द्वारो पर आज्ञा दे देते कि जीवक जिस वाहन से चाहे उस वाहन से जाये, जिस समय चाहे उस समय जाये, जिस समय चाहे उस समय नगर के भीतर आवे।"

तब राजा प्रद्योत ने वाहनागारो और द्वारो के लिए जीवक के कथनानुसार आज्ञा दे दी। उस समय प्रद्योत की भद्रावतिका नामक हथिनी दिन में ५० योजन चलने वाली थी। जीवक कौमार भृत्य भेपज्य तैयार कर राजा के पास ले गया—"देव! कपाय पीयें! तव जीवक राजा को घी पिलाकर हथिसार में जा भद्रावती हथिनी पर सवार हो नगर से निकल पडा। तब राजा प्रद्योत को उस पीये हुये घी से उलटी हो आई। राजा प्रद्योत ने अपने आदमियो से कहा—"भणे! दुष्ट जीवक ने मुझे घी पिलाया है। जीवक वैद्य को ढूढो।"

"देव! भद्रावतिका हथिनी पर नगर से वाहर गया है।' उस समय अमनुष्य से उत्पन्न काक नामक राजा प्रद्योत का दास दिन में साठ योजन चलने वाला था। राजा प्रद्योत ने काक को आदेश दिया—

"भणे काक! जा, जीवक वैद्य को लौटा ला। उससे कहना आचार्य! राजा तुम्हें लौटाना चाहते है।' भणे काक! यह वैद्य लोग वडे मायावी होते हैं। उसके हाथ का कुछ मत लेना।"

"बस, आर्य ! देव मेरा उपकार याद रखें।" उस समय राजा प्रद्योत को शिवि[1] देश से दुशालो का एक जोडा प्राप्त हुआ था। उसने उसे जीवक के लिये भेजा। तब जीवक कौमारभृत्य के मन में यह हुआ—'कि इस दुशाले को अर्हत सम्यक सम्बुद्ध के विना या राजा मागध श्रेणिक विम्वसार के विना दूसरा कोई (उपयोग) करने योग्य नही है।' उसने भगवान् के पास जाकर कहा—"भन्ते ! भगवान् पासुकूलिक हैं (लत्ताधारी हैं)। और भिक्षु सघ भी। भन्ते ! मुझे यह शिवि का दुशाला जोडा राजा प्रद्योत ने भेजा है। आप कृपा करके इसे स्वीकार करें। और भिक्षु सघ को गृहस्थो के दिये चीवर की आज्ञा दे।"

उज्जैन का राजा चड प्रद्योत वडा ही शक्तिशाली एव पराक्रमी नरेश था। उसने वैभव-सम्पन्न तथा हस्तिसेना से सदा सवद्ध रहने वाले कौशाम्बी नरेश उदयन को परास्त कर जीवित पकडवा लिया था और पीछे उसकी पुत्री वासुलदत्ता[2] के साथ उदयन के वैवाहिक सम्वन्ध स्थापित हो जाने पर अवन्ति नरेश और वत्स के राजवश में दृढ मैत्री के सूत्र वँध गये थे। तब से एक दीर्घ काल तक इन दोनो राज्यो में परस्पर सहयोग तथा सद्भावनायें वनी रही किन्तु कुछ दिनो के उपरान्त उदयन का सम्पूर्ण वत्स जनपद अवन्ति की राजसत्ता का एक अङ्ग हो गया था और सम्पूर्ण भारत में मगध और अवन्ति जनपद ही महाशक्तियो में

---

१ वर्तमान सीबी—वलोचिस्तान के आस-पास का प्रदेश या शेरकोट पजाब के आसपास का प्रदेश।

२ इन्हीं का नाम वासवदत्ता भी था।

केन्द्रित हो गये थे। धम्मपदट्ठकथाओं[1] में वर्णित निम्नलिखित कथा इन दोनो राजवशो एव जनपदो के वैभव तथा पारस्परिक सम्बन्धो पर पर्याप्त प्रकाश डालती है—

"उज्जैनी में चड प्रद्योत नामक राजा राज्य करता था। एक उसने उद्यान में जाते हुए, अपनी सम्पत्ति को देख—'क्या और किसी की ऐसी सम्पत्ति है?' ऐसा मनुष्यो से पूछा।"

"यह क्या सम्पत्ति है? कौशाम्बी में उदयन राजा की सम्पत्ति वहुत वडी है।"

"तो मै उसे ले लूगा।"

"आप उसे नही ले सकते।"

"जो कुछ भी कर के लेंगे।"

"देव आप नही ले सकते।"

"क्यो?"

"वह हस्ति-कान्त नामक शिल्प को जानता है। मत्र को जप कर हस्तिकान्त वीणा को वजाते हुए हाथियो को भगा भी देता है। पकड भी लेता है। हस्तिवाहन से युक्त उसके समान दूसरा कोई नही है। उसे लिया जा सकता है। देव! यदि आपका यह दृढ निश्चय है तो काष्ठ की हस्ति का निर्माण कर उसके समीप के स्थान में भेजिये। वह हस्तिवाहन या अश्ववाहन सुनकर दूर तक भी जाता है। उसे वहाँ आने पर पकडा जा सकता है।" राजा ने इसे सुनकर —"यह उपाय है।" सोचा और काष्ठमय यत्र हस्ति वनवा वाह्य भाग को वस्त्र-खडो से लपेट, चित्रित कर के उसके राज्य में समीपस्थ स्थान में एक तालाव के

किनारे छुड़वा दिया। हस्ति के पेट के भीतर साठ पुरुष (सैनिक) इधर-उधर चँक्रमण करते थे। हाथी की लीद को दूर से लाकर इधर-उधर विखेरते थे। एक वन में विचरण करने वाले पुरुष ने उस हस्ति को देख कर—'यह हमारे राजा के योग्य है।' विचार कर जा राजा से निवेदन किया—"देव! मैंने सर्व-श्वेत कैलाश-शिखर के सदृष्य आप के ही योग्य श्रेष्ठ वारण को देखा है।"

उदयन (उदेन) उसी पुरुष को पथ-प्रदर्शक वनाकर हस्ति पर आरूढ हो ससैन्य निकला। उसके आने की वात को जानकर चर पुरुषो ने जाकर चड प्रद्योत से कहा। वह आकर मध्य भाग को रिक्त कर के दोनो पार्श्वों में सेना को वढाया। उदयन उसके आने की बात को न जानता हुआ हाथी का पीछा किया। भीतर रहनेवाले मनुष्यो ने उसे तीव्रगति से भगाया। काष्ठ-हस्ति, राजा के कहे मत्र को जपते और वीणा-वादन को अनसुनी करते भागता ही रहा। राजा हस्ति के पास न पहुँच सकने पर घोडे पर आरूढ हो उसका पीछा किया। उसके तीव्र-गति से पीछा करने पर, उसके सैनिक पीछे छूट गये। राजा अकेला हो गया। तव दोनो पार्श्वों पर नियुक्त चड प्रद्योत के सैनिको ने उसे पकड कर राजा को दिया। तव उसकी सेना शत्रु के हाथ में पड जाने की बात को जान वाह्य भाग में पडाव डाल दिया। चड प्रद्योत भी उदयन को जीवित ही पकड कर वन्दीगृह में डाल तीन दिनो तक विजयोत्सव मनाया। उदयन ने तीसरे दिन अग रक्षको से पूछा—"तात! तुम्हारे राजा कहाँ है?"

"मैंने शत्रु पर विजय पाई है ऐसा सोच विजयोत्सव मना रहे है।"

उदयन ने उसे सुन—"क्या तुम लोगो के राजा का यह कार्य स्त्रियो के समान नही है? अपने शत्रु को मार डालना या मुक्त करना नही चाहिये? हमें दुख में डाल कर विजयोत्सव मना रहे हैं।"

उन्होने जाकर उस बात को राजा से कहा। वह आकर—"क्या तूने सचमुच ऐसा कहा है?" पूछा

"हाँ महाराज!"

"बहुत अच्छा, मैं तुझे मुक्त कर दूँगा। किन्तु क्या अपने मत्र को मुझे भी दोगे?"

"बहुत अच्छा, दूँगा। किन्तु आप यह बताइये कि आप मुझे प्रणाम करेंगे?"

"क्या मैं तुझे प्रणाम करूँगा? नही प्रणाम करूँगा।"

"मैं भी आपको नही दूँगा।"

"ऐसा करने पर तुझे दड दूँगा।"

"दो, आप का मेरे शरीर पर वश है किन्तु मेरे चित्त पर नही।

राजा ने उसकी पुरुष गर्जना सुन कैसे मैं इसके मत्र को ग्रहण करूँगा, विचार कर इस मत्र को कोई दूसरा नही जान सकता, अपनी पुत्री को इसके पास सिखा कर मैं उससे सीख लूगा। ऐसा सोच उससे कहा—"दूसरे के प्रणाम कर ग्रहण करने पर उसे दोगे?"

"हाँ, महाराज?"

"तो मेरे घर में एक कुब्जा है। उसके परदे के भीतर बैठने पर, तुम परदे से बाहर रह कर मत्र को पढो।"

"अच्छा महाराज ! कुब्जा हो या लगडी, प्रणाम करने पर ही दूँगा।

तत्पश्चात् राजा ने जाकर अपनी पुत्री वासुलदत्ता से कहा— "पुत्री ! एक कोढी अमूल्य मत्र को जानता है। वह दूसरे को नही वता सकता। तू परदे के भीतर वैठ कर मत्र सीख। वह परदे से वाहर रह कर तुझे सिखायेगा। तुमसे मैं सीख लूगा।"

इस प्रकार उसने उनके पारस्परिक मैत्री के भय से पुत्री को कुब्जा और उस दूसरे को कोढी वना कर कहा। वह परदे के भीतर वैठी हुई राजकुमारी को परदे के वाहर रह कर मत्र सिखलाया। एक दिन वार-वार वोलने पर भी मत्र पाठ न कर सकने पर उसने कहा—"अरी कुब्जे वडे मोटे ओठ व गाल वाला तुम्हारा मुख है। ऐसे वोलो।"

राजकुमारी ने क्रोधित होकर कहा—"अरे दुष्ट कोढी ! क्यो ऐसा कह रहा है ? मेरे जैसे ही कुब्जा होती है ?"

परदे को उठा कर "तुम कौन हो।" पूछने पर "मैं राजकुमारी वासुलदत्ता हूँ।" कहा। पिता ने तुझसे मुझे वतलाते हुए कुब्जा कहा था और मुझसे तुझे कोढी वतलाया था। उन दोनो ने भी—"तो हम लोगो के प्रणय के भय से कहे होगे।" सोच कर परदे के भीतर ही परिचय किया। तव से लेकर मत्र ग्रहण या शिल्प-ग्रहण नही हुआ। राजा भी पुत्री से नित्य पूछता था।

"क्या पुत्री ! शिल्प सीखती हो ?"

"हाँ पिता जी ! सीखती हूँ।"

एक दिन उससे उदयन ने कहा—"भद्रे ! स्वामी द्वारा किये जाने वाले काम न तो माता-पिता द्वारा किये जा सकते और न भाई अथवा वहिन द्वारा। यदि मुझे जीवन दोगी तो मैं तुझे पाँच सौ स्त्रियो का समूह देकर अग्र-महिषी का स्थान प्रदान करूँगा।"

"यदि इस वचन के लिय दृढ प्रतिज्ञा करोगे तो मै तुझें जीवन दान दूँगी।"

"भद्रे ! करूँगा।"

"अच्छा, स्वामी !"

वह पिता के पास जा प्रणाम कर एक ओर खडी हो गई। तव उसने पूछा—"क्या पुत्री ! शिल्प समाप्त हो गया?"

"हाँ पिता जी ! शिल्प समाप्त हो गया।"

"तो पुत्री ! क्या वात है?"

"हम लोगो को एक द्वार एव एक वाहन मिलना चाहिये।"

"पुत्री ! यह क्या वात है?"

"पिता जी ! रात्रि में तारो के प्रकाश में मत्र के उपयुक्त एक औषधि ग्रहण करनी है। इसलिये हम लोगो को समय या असमय में निकलने के लिये एक द्वार और एक वाहन मिलना चाहिये।"

राजा ने "वहुत अच्छा।" कह कर स्वीकार कर लिया।

उन्होने इच्छानुसार एक द्वार को प्राप्त कर लिया। राजा के पास ५०० वाहन थे। भद्रवतिका नामक एक हथिनी एक दिन में ५० योजन जाती थी। काक नामक दास ६० योजन जाता था। वेलकेशी और मुजकेशी दो अश्व १०० योजन जाते थे। नालागिरि नामक हाथी १२० योजन।

एक दिन राजा चंड प्रद्योत क्रीडा के हेतु निकला। उदयन ने "आज भागना चाहिये।" सोच, बडे बडे चमडे के थैलो को सोने-चाँदी से भर कर हथिनी के पीठ पर रख वासुलदत्ता को ले भाग गया।

नगर के आन्तरिक रक्षको ने देख कर जा राजा से कहा। तब राजा ने "शीघ्र जाओ। कह कर सेना भेजी। उदयन ने सेना द्वारा पीछा किये जाने की बात जान कार्षापणो के थैले को खोल कर गिराते हुए विखेर दिया। मनुष्य कार्षापणो को सग्रह कर पुन दौडे। उसने फिर सोने के थैले को खोल कर गिरा दिया। उनके स्वर्ण के लोभ में पडे रहते समय ही बाहर प्रतीक्षा में पडे हुए अपने स्कधावार में पहुँच गया। वह आते ही अपनी सेना से घिरा हुआ नगर में प्रवेश किया। वह जा वासुलदत्ता का अभिषेक कर अग्र-महिषी का स्थान प्रदान किया।"[1]

विनय-पिटक[2] में आये हुए प्रत्यान्त देश के वर्णन से ज्ञात होता है कि अवन्ति, जन-पद (मालवा) दक्षिण-पथ में पडता था और उसे अवन्ति दक्षिणापथ के नाम से पुकारा जाता था। अवन्ति दक्षिणापथ जनपद मध्यदेश से बाहर प्रत्यान्त जनपद में पडता था। वहाँ के लोग महाकात्यायन के धर्मोपदेश से प्रभावित होकर अधिकाशत बौद्धधर्मानुरागी हो गये किन्तु भिक्षुओ की सख्या बहुत कम थी। महाकात्यायन के शिष्य शोण कुटिकण्ण की उपसम्पदा बडी मुश्किल से तीन वर्षों के बाद हो सकी थी और

---

१ धम्मपदट्ठ कथा २, १

२ विनय पिटक ३, ५, ३, १

में वर्णन प्राप्त होता है।[1] यह भी ज्ञातव्य है कि कुररघर का पर्वत, प्रपात से युक्त था।

पालिग्रथो से विदित होता है कि अवन्ति दक्षिणापथ की भूमि काली (कण्हुत्तरा), कडी और गोखरू (गो कटको) से भरी थी। वहाँ के लोगो को उपानह का पहनना आवश्यक था। इसलिये अवन्ति जनपद के भिक्षुओ को भी तथागत ने उपानह की आज्ञा दी थी। अवन्ति जनपद की शिप्रा (क्षिप्रा), चम्बल, नर्मदा, काली सिन्ध, वेत्रवती, आदि सरितायें पुण्यसलिला मानी जाती थी। जिनमें शिप्रा, नर्मदा, वेत्रवती मुख्य थी। उज्जैन महान पवित्र तीर्थ स्थान और पुण्य नगरी के रूप में प्रख्यात था। अवन्ति जनपद की जनता स्नानप्रेमी थी जिस कारण तथागत को प्रत्यान्त तथा अवन्ति जनपद के भिक्षुओ के लिये नित्य स्नान करने के हेतु आज्ञा देनी पडी थी। अवन्ति जनपद के लोग उदक से शुद्धि मानने वाले थे।[2] जिस प्रकार मध्यदेश की गगा, बाहुका, अधिक्क, गया, सुन्दरिका, सरस्वती, बाहुमती, और फलगू नदियाँ उदक शुद्धि के हेतु परम पवित्र मानी जाती थी। उसी प्रकार अवन्ति दक्षिणपथ में शिप्रा, नर्मदा, और वेत्रवती सरितायें उदक शुद्धि की केन्द्र मानी जाती थी। प्रति वर्ष कार्तिक और माघ मास में असख्य जन-समह इनमें स्नान कर अपने को मक्ति फल का भागी समझता था।

---

१. सयुत्त-निकाय २१, १, १, ३ और सयुत्त-निकाय २१, १. १, ४
विनय-पिटक ३, ५, १

२. मज्झिम-निकाय १, १, ७

अवन्ति दक्षिणापथ की राजधानी उज्जैन, गोदावरी तीर से कौशम्बी होते हुए साकेत एव श्रावस्ती तक जाने वाले मार्ग में पडता था। वावरी की शिष्य परम्परा जब गोदावरी तीर से उत्तरापथ की ओर तथागत के दर्शनार्थ प्रस्थान की थी, तब उन्हें उज्जैन से होकर जाना पडा था। सुत्त-निपात के परायणवग्ग[1] में इस प्रकार वर्णन आया है—

"वावरिं अभिवादेत्वा कत्वा च न पदक्खिणं।
जटाजिन धरा सब्बे पक्कामु उत्तरामुखा॥
अलकस्स पतिट्ठान पुरिम माहिस्सतिं तदा।
उज्जेनिं चापि गोनद्धं वेदिसं वनसव्हयं॥
कोसम्बिं चापि साकेत सावत्थिं च पुरुत्तमं।
सेतव्य कपिलवत्थु कुसिनार च मन्दिरं॥"

इससे स्पष्ट है कि अश्वक प्रदेश के अलक से चलने के पश्चात् क्रमश प्रतिष्ठान, माहिष्मती, उज्जैन, गोनर्द्ध, विदिशा, वन, कौशाम्बी, साकेत, श्रावस्ती, सेतव्य, कपिलवस्तु और कुशीनारा पडे थे। अश्वक से उज्जैन तक एक महामार्ग आता था और वहाँ से कौशाम्बी की ओर जाता था। मथुरा, सुप्पारक और सत्यवट्टपुर से भी उज्जैन के लिए मार्ग आते थे। तात्पर्य अवन्ति दक्षिणपथ चतुर्दिक से आने वाले व्यापारिक मार्गों से सम्बद्ध था तथा दक्षिणापथ में व्यापार का प्रमुख केन्द्र समझा जाता था।

पालि ग्रंथो से यह भी ज्ञात होता है कि अवन्ति दक्षिणापथ के लोग चर्ममय अस्तरण (बिछौने) प्रयोग में लाते थे। जिनमें

---

१. सुत्त-निपात ५, १

मेढ चर्म, अज चर्म और मृग चर्म प्रमुख थे इसी हेतु तथागत को भिक्षुओ के हेतु इनकी अनुज्ञा देनी पडी थी।[1] बुद्ध काल के पश्चात् समय समय पर बौद्ध-भिक्षुओ एव राजाओ की निर्मल प्रेरणाओ से मध्यभारत और उसके निकटस्थ प्रदेश बौद्ध उपासक-उपासिकाओ तथा विहारो, स्तूपो और सघारामो से सुशोभित हो गये थे। सम्राट अशोक के समय में मध्य-भारत की वसुन्धरा भारतीय सस्कृति की अमूल्य निधि बौद्ध विचार धारा एव दार्शनिक दृष्टियो से समुज्ज्वल हो गई थी। सम्पूर्ण जनपद एव उसके अचल प्रदेश बौद्ध-कला-कृतियो से परिपूर्ण हो गये थे। एक स्थान से दूसरे स्थान तक, एक नगर से दूसरे नगर तक और एक बौद्ध विहार से दूसरे बौद्ध विहार तक जाने वाले मार्ग तथागत् के पावन सदेशो को सुनाते हुए जनपद के मन को श्रद्धा विभोर करते, स्तम्भो, स्तूपो एव भिक्षु-आवासों से अलकृत थे। सम्राट अशोक के समय में मालव भूमि में धर्म की वह अद्भुत धारा प्रवाहित हुई थी जिसमें अवगाहन कर असख्य प्राणियो ने यह लोक तथा परलोक में अपने जीवन सौख्य को प्राप्त किया। उस विमल धर्म-धारा के चिह्न आज भी मालव-प्रदेश के भूगर्भ में छिपे तथा खडित नष्टावशेषो के रूप में विद्यमान है।

उज्जैनी, महिष्मती, नाथ, कसरावद, धमनार, चम्पावती, तुम्बवन, खेजडिया भोप, राजपुर, ग्यारसपुर, विदिशा, साँची, आदि अशोक कालीन कला-कृतियो के ज्वलत दृष्टान्त है। इन स्थानो के गौरव में ही मालव प्रदेश (मध्य-भारत) का गौरव निहित है। इन पवित्र स्थानो में जो आज नष्ट-भ्रष्ट पडे है। जिनमें से अधिकाश उपेक्षित

---

१ विनयपिटक ३, ५, ३, १

हैं। वडे वडे शासको, अर्हतो एव स्वर्गस्थ देवताओ के पद सचरण हुए हैं। इनकी ईंट, इनके पत्थर और इनके वास्तुकला के समस्त प्रत्याङ्ग श्रद्धालु मालव नर-नारियो की श्रद्धा एव अर्चनामयी भावनाओ की देन हैं।

उनके परम त्याग, तपस्या एव भक्ति के उज्ज्वल स्तम्भ हैं। वह दिन कितना मनोरम रहा होगा जव इन पवित्र नष्टावशेषो के भू-भाग पर निर्मित रमणीय विहारो में भिक्षुओ द्वारा सूत्रपाठ होता रहा होगा और उपोसथ के दिन उत्साह, श्रद्धा एव धर्म से आपूरित जनता इन वौद्ध विहारो की छत्र-छाया में सद्-चरित्र भिक्षुओ के समीप पचशील एव अष्टशील को ग्रहण करने के लिये जाती रही होगी। अमावस्या और पूर्णिमा के दिन सावतिन्स भवन के सुधर्मा सभा की भाँति सारा मालव-प्रदेश धर्म श्रवण करता हुआ अपने पुण्य में सलग्न हो धर्म कार्य के प्रति दत्तचित्त रहता होगा। मालव पुत्रो एव पुत्रियो ने तज्जन्य भावनाओ से प्रेरित होकर महामहेन्द्र एव सघमित्रा जैसे अपने प्रिय सतति को भी धर्मप्रचारार्थ सुदूर देशो में सदा के लिये प्रेषित करते हुए आल्हाद का अनुभव किया था। विदिशा-कुमारी देवी का त्याग आज भी साँची के पावन खडहरो से आँका जा सकता है।

## विन्ध्य-प्रदेश

प्राचीन चेदि जनपद क्षेत्र के अन्तर्गत ही आधुनिक विन्ध्यप्रदेश अवस्थित है। वुदेलखड, वघेलखड, एव दशार्ण चेदि जनपद के ही अग है। यह जनपद विन्ध्यपर्वतमाला में नर्मदा के उत्तरकेन, वेत्रवती, दशार्ण एव सोनभद्र सरिताओ के जल प्रवाह से अभिसिंचित

था। इसकी राजधानी सोत्थिवती नगर था। इसके अन्य प्रसिद्ध नगर सहजात और त्रिपुरी थे। वेदम्म जातक से ज्ञात होता है कि काशी और चेदि के बीच बहुत लुटेरे रहते थे। जेतुत्तर नगर से चेदि जनपद ३० योजन दूर था। सहजात मे आयुष्मान महाचुन्द ने बौद्धधर्म का उपदेश दिया था। यह बौद्धधर्म का एक बडा केन्द्र था। इस समय यहाँ के नष्टावशेषो के उत्खनन से इसके प्रमाण तथा प्राचीन कला-कृतियो के भव्य प्रतीक प्राप्त हो चुके हैं। आयुष्मान अभिरुद्ध ने चेदि के प्राचीन वश मृगदाय में रहते हुए अर्हत्व प्राप्त किया था। सहञ्चनिका भी चेदि जनपद का एक प्रसिद्ध नगर था जहाँ भगवान् बुद्ध गये थे।

वेत्रवती नगर जो वेत्रवती के किनारे बसा था चेदि जनपद में ही पडता था।

दशार्ण (दसण्ण) प्रदेश भी एक विख्यात् भू-भाग था। जिसका एक कच्छ नगर अपनी गौरव गरिमा के लिये प्रसिद्ध था इस प्रदेश के लोग अरण्य निवासी तथा एकान्त प्रिय थे।

विन्ध्य-प्रदेश में खजुराहो और भिया कुन्ड तथा भरहुत के बौद्ध नष्टावशेष चेदि जनपद की बौद्ध-कला-कृतियो के केन्द्र थे। भरहुत की बौद्ध-कला-कृतियाँ भारत-प्रसिद्ध हैं। प्रस्तर पट्टिकाओ पर उत्कीर्ण जातक कथायें, बोधि सत्वावदान एव तथागत के जीवन से सम्बद्ध आकृतियाँ भारतीय कला एव बौद्ध सस्कृति के महानतम प्रतीक हैं। ससार प्रसिद्ध खजुराहो विन्ध्य की रत्नगर्भा भूमि का एक कला-ज्योति खड है। एक समय था जब विन्ध्यप्रदेश की भूमि कला-कृतियो से परिपूर्ण थी और यहाँ की जनता त्रिरत्न की उपासक थी। अशोक

काल में इस प्रदेश की पर्याप्त उन्नति हुई थी। यद्यपि आज विन्ध्य-प्रदेश के बौद्ध अवशेषो के प्रति उपेक्षा ही बढती जा रही है। फिर भी बौद्ध-सस्कृति एव बौद्ध कला-कृतियो के सर्वाङ्ग तथा पूर्ण अध्ययन के लिये इनका प्रेक्षण अत्यत अपेक्षित है। पश्चात्य पुरातत्व-विदो ने खजुराहो और भरहुत के महत्व को समझा था और उन्होंने मुक्तकठ से यहाँ की कला-कृतियो का गुण-गान किया था। यद्यपि आज इन स्थानों के अधिकाश कला-प्रतीक कलकत्ता, नई दिल्ली तथा प्रयाग के सग्राहलयो की शोभा बढा रहे है। तथापि इनकी अवशिष्ट नीवें, दीवारें, मूर्तियाँ, तोरण, वेस्टनी आदि कला-कृतियाँ दर्शन क्षण में ही हृदय को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है तथा बौद्ध-कालीन भारत के स्वर्णिम पृष्ठो को खोलकर सामने प्रस्तुत करने लगती है।

विन्ध्य-प्रदेश का वह काल कितना गौरवमय रहा होगा जब सहस्त्रो की सख्या में उपस्थित हो श्रद्धालु उपासिक-उपासिकायें एव श्रमण इन नष्टावशेषो के स्थल पर सुशोभित पावन विहारो प्रागण में बैठकर तथागत के गुण-गान करते होगे। अपनी श्रद्धाञ्जलि बुद्ध-प्रतिमा के श्री चरणो पर समर्पित करते हुए परम आनन्द का अनुभव करते रहे होगे। क्या ? सम्प्रति हम यह कल्पना कर सकते हैं कि कितने जीवनमुक्त अर्हतो के पवित्र चरण इस भू-भाग पर पडे होगे। और क्या इसकी भी कल्पना की जा सकती है कि कितने (विन्ध्य-प्रदेश के) कुल-पुत्रो ने घर द्वार तथा परिवार के ममत्व को त्याग कर महान त्याग का पथ अपनाया होगा। यथार्थ में विन्ध्यप्रदेश की भूमि तपस्या एव आध्यात्म भावना की सुन्दर पर्ण-

कुटी है जहाँ यहाँ के सुपुत्रो ने इस लोक तथा परलोक का हित-चिन्तन करते हुए अपना त्यागमय जीवन व्यतीत किया था। यह विन्ध्य की भूमि कितनी धन्य है जहाँ विन्ध्य-पर्वत-मालाओ की छटा तथा कुञ्ज वल्लरियाँ सदा कला-प्रेमियो को नव-प्रेरणा प्रदान करती रहती हैं। भारत की मेखला सदृश स्थित विन्ध्यमाला के मध्य सुशोभित विन्ध्य-प्रदेश बौद्ध-कला-कृतियो को सँजोये विराजमान है। यहाँ की कला-कृतियो के सौष्ठव एव निर्माण-विधि के प्रति बौद्ध जगत कृतकृत्य है।

## मध्यप्रदेश

मध्य-प्रदेश बौद्धकला-कृतियो का आगार है। प्राचीन बौद्ध-नष्टावशेष मध्यप्रदेश की वसुन्धरा के वक्षस्थल पर बिखरे हुए आज भी हमें बौद्धकाल के स्वर्णिम-युग की स्मृति दिला रहे हैं। इस भू-भाग पर बौद्ध-सस्कृति की ऐसी अमिट छाप पडी है जो भारत के

(जो महाकात्यायन द्वारा प्रवज्जित हो गया था।) की शिष्य परम्परा ने अश्वक, कोशल, विदर्भ आदि प्रदेशो में वौद्धधर्म का प्रचार एव प्रसार किया था। यही कारण था कि सम्राट अशोक ने धर्म-प्रचारक भिक्षुओ को महाराष्ट्र प्रदेश में भेजा था, अश्वक, महाकोशल एव विदर्भ में नहीं।

पालि ग्रथो से यह ज्ञात होता है कि अश्वक और महाकौशल जनपद कभी काशी-राज्य में गिने जाते थे। अश्वक गोदावरी के तीर पर फैला हुआ था। प्राचीन काल में अश्वक की राजधानी पोतन (पैठन) इस दिशा की सव से वडी नगरी थी। महागोविन्द सुत्त[1] के अनुसार भारत के सात प्राचीन विभागो में एक वडे विभाग का वह केन्द्र स्थान था और महाकौशल भी इसी के अन्तर्भूत था।

सम्प्रति मध्यप्रदेश की पहाडियो में अनेक भव्य एव कलापूर्ण वौद्ध-गुफायें उपलव्ध हुई हैं। वाकाटक और सोमवशी राजाओ द्वारा निर्मित वौद्ध विहारों, स्तूपो एव सघारामों के अवशेष तथा उनसे प्राप्त मूर्तियाँ, पात्र, कलात्मक वस्तुयें, मुद्रायें, प्रस्तर खडों पर उत्कीर्ण कला-कृतियाँ मध्य-प्रदेश में वौद्ध-धर्म के वस्तु, भास्कर्य, एव कलाक्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं।

इन स्थानो में जिन वौद्ध कला-विदो की वुद्धिमता शिल्पज्ञता एव श्रद्धा छेनी और प्रस्तर खडो द्वारा अभिव्यक्त हुई है उन्हें स्मरण कर आज भी भावुकमन उनकी लगन, कार्यपरायणता तथा परिश्रम का अवलोकन कर कृत-कृत्य हो उठता है। एक समय मध्य-प्रदेश वौद्ध उपासक-उपासिकाओ और भिक्षु-भिक्षुणियो के सच्चरित्र

---

१. दीघ-निकाय २, ६

कुटी है जहाँ यहाँ के सुपुत्रो ने इस लोक तथा परलोक का हित-चिन्तन करते हुए अपना त्यागमय जीवन व्यतीत किया था। यह विन्ध्य की भूमि कितनी धन्य है जहाँ विन्ध्य-पर्वत-मालाओ की छटा तथा कुज वल्लरियाँ सदा कला-प्रेमियो को नव-प्रेरणा प्रदान करती रहती है। भारत की मेखला सदृश स्थित विन्ध्यमाला के मध्य सुशोभित विन्ध्य-प्रदेश बौद्ध-कला-कृतियो को सँजोये विराजमान है। यहाँ की कला-कृतियो के सौष्ठव एव निर्माण-विधि के प्रति बौद्ध जगत कृतकृत्य है।

## मध्यप्रदेश

मध्य-प्रदेश बौद्धकला-कृतियो का आगार है। प्राचीन बौद्ध-नष्टावशेष मध्यप्रदेश की वसुन्धरा के वक्षस्थल पर बिखरे हुए आज भी हमें बौद्धकाल के स्वर्णिम-युग की स्मृति दिला रहे हैं। इस भू-भाग पर बौद्ध-सस्कृति की ऐसी अमिट छाप पडी है जो भारत के उत्थान-पतन के परिवर्तन चक्र में पडकर भी अचल सी बनी हुई है। रूपनाथ पचमढी, भद्रावती, तुरतुरिया, रामटेक, अमरावती, पातुर, श्रीपुर, भेडाघाट और त्रिपुरी के बौद्ध खडहर महा-कौशल एव विदर्भ (मध्यप्रदेश) में बौद्ध-कला-कृतियो के प्रमुख स्थान हैं जिनके दर्शनार्थ चीनी यात्री हुएनसाग आया था और अपने भ्रमण-वृत्तात में इनका बडा सुन्दर वर्णन किया है। मध्यप्रदेश में विस्तृत बौद्ध सस्कृति के प्रतीको का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि बुद्धकाल से लेकर तेरहवी शताब्दि के आरम्भ तक मध्यप्रदेश में बौद्ध-धर्म व्याप्त था। त्रिपिटक एव अट्ठकथा ग्रंथो से विदित होता है कि भगवान् बुद्ध के समय में बावरी के शिष्यो तथा अश्वक-नरेश

(जो महाकात्यायन द्वारा प्रवज्जित हो गया था।) की शिष्य परम्परा ने अश्वक, कोशल, विदर्भ आदि प्रदेशों में बौद्धधर्म का प्रचार एव प्रसार किया था। यही कारण था कि सम्राट अशोक ने धर्म-प्रचारक भिक्षुओ को महाराष्ट्र प्रदेश में भेजा था, अश्वक, महाकोशल एव विदर्भ में नहीं।

पालि ग्रथो से यह ज्ञात होता है कि अश्वक और महाकोशल जनपद कभी काशी-राज्य में गिने जाते थे। अश्वक गोदावरी के तीर पर फैला हुआ था। प्राचीन काल में अश्वक की राजधानी पोतन (पैंठन) इस दिशा की सब से बडी नगरी थी। महागोविन्द सुत्त[1] के अनुसार भारत के सात प्राचीन विभागो में एक बडे विभाग का वह केन्द्र स्थान था और महाकोशल भी इसी के अन्तर्भूत था।

सम्प्रति मध्यप्रदेश की पहाडियो में अनेक भव्य एव कलापूर्ण बौद्ध-गुफायें उपलब्ध हुई हैं। वाकाटक और सोमवशी राजाओ द्वारा निर्मित बौद्ध विहारो, स्तूपो एव सघारामो के अवशेष तथा उनसे प्राप्त मूर्तियाँ, पात्र, कलात्मक वस्तुयें, मुद्रायें, प्रस्तर खडो पर उत्कीर्ण कला-कृतियाँ मध्य-प्रदेश में बौद्ध-धर्म के वस्तु, भास्कर्य, एव कलाक्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं।

इन स्थानो में जिन बौद्ध कला-विदो की बुद्धिमता शिल्पज्ञता एव श्रद्धा छेनी और प्रस्तर खडो द्वारा अभिव्यक्त हुई है उन्हें स्मरण कर आज भी भावुकमन उनकी लगन, कार्यपरायणता तथा परिश्रम का अवलोकन कर कृत-कृत्य हो उठता है। एक समय मध्य-प्रदेश बौद्ध उपासक-उपासिकाओ और भिक्षु-भिक्षुणियो के सच्चरित्र

---

१ दीघ-निकाय २, ६

की निर्मल ज्योति से आलोकित था। जिस समय परिवेणो में धर्म-उपदेश होते थे, दार्शनिक वार्तायें होती थी, श्रद्धा-विभोर दायको द्वारा सघ को दान अर्पण किये जाते थे तथा मध्य-प्रदेश की गौरवमयी ललनायें और पुण्येक्षु जन समवेत हो धर्म कार्यों में सलग्न होते थे। उस समय धर्म की जो अद्भुत धारा प्रवाहित हुई थी उसका स्मरण कर मध्यप्रदेश के इतिहास का स्वर्णिम युग आँखो में झलक जाता है। उस समय मध्यप्रदेश की भूमि पवित्र सूत्रो, परित्रो एव मगल पाठो से गुजित थी। यद्यपि आज मध्य प्रदेश में वहुत थोडे वौद्ध हैं तथापि बौद्ध कलाकृतियो के अवशेष भारत के किसी भी भाग की वौद्ध-कला-कृतियो से तुलना में निम्न नही है। उनसे दर्शको को सदैव त्रिरत्न के प्रति श्रद्धा-भावना की प्रेरणा प्राप्त होती है और वह तथागत का स्मरण करते अपने परम त्याग भिक्षु-भिक्षुणियो का यश गान करते बोल उठता है—

"वुद्ध सरण गच्छामि।
धम्म सरण गच्छामि।
सघ सरण गच्छामि।"

—कुमारी विद्या

भगवान् तथागतके चरण कमलानुरागी

हैहयार्णव-रत्न माहिष्मतीश-वंश-प्रदीप

स्वर्गीय

पितामह रामनाथसिंह शायर

की

पुण्य स्मृति

में

बुद्ध पूर्णिमा,
२४९९ बुद्धाब्द ।

—कुमारी विद्या

की निर्मल ज्योति से आलोकित था। जिस समय परिवेणो में धर्म-उपदेश होते थे, दार्शनिक वार्तायें होती थी, श्रद्धा-विभोर दायको द्वारा सघ को दान अर्पण किये जाते थे तथा मध्य-प्रदेश की गौरवमयी ललनायें और पुण्येक्षु जन समवेत हो धर्म कार्यों में सलग्न होते थे। उस समय धर्म की जो अद्भुत धारा प्रवाहित हुई थी उसका स्मरण कर मध्यप्रदेश के इतिहास का स्वर्णिम युग आँखो में झलक जाता है। उस समय मध्यप्रदेश की भूमि पवित्र सूत्रो, परित्रो एव मगल पाठो से गुजित थी। यद्यपि आज मध्य प्रदेश में वहुत थोडे बौद्ध हैं तथापि बौद्ध कलाकृतियो के अवशेष भारत के किसी भी भाग की बौद्ध-कला-कृतियो से तुलना में निम्न नही है। उनसे दर्शको को सदैव त्रिरत्न के प्रति श्रद्धा-भावना की प्रेरणा प्राप्त होती है और वह तथागत का स्मरण करते अपने परम त्याग भिक्षु-भिक्षुणियो का यश गान करते बोल उठता है—

"बुद्ध सरण गच्छामि।
धम्म सरण गच्छामि।
सघ सरण गच्छामि।"

—कुमारी विद्या

भगवान् तथागतके चरण कमलानुरागी

हैहयार्णव-रत्न माहिष्मतीश-वंश-प्रदीप

स्वर्गीय

पितामह रामनाथसिंह शायर

की

पुण्य स्मृति

में

बुद्ध पूर्णिमा,
२४९९ बुद्धाब्द।

—कुमारी विद्या

# बौद्ध कला-कृतियाँ

# बौद्ध युग और कला

भारत में धर्म, साहित्य एव कला का अति निकट सम्बन्ध सदा से रहा है। जो साहित्य में पढ, सुन या मनन कर प्राप्त होता है। वह कला में साकार या पूर्ण रूप से सामने आता है। कला अर्थात् यहाँ पर शिल्पाकन एव चित्रण की ओर मानव मात्र की स्वाभाविक अभिरुचि होती है। क्योंकि मानव सदैव सुषमा का पुजारी रहा है। प्रत्येक युग अपने साहित्य के साथ कला की अक्षय निधि को आज भी सँजोये है। प्राचीन मूर्तिकला मजुल भावनाओ को समेटे अतीत की मूर्तिगत स्मृति है। इसी तरह बौद्ध युग भी जहाँ एक ओर पालि साहित्य के भडार को पूर्ण किया है, वहाँ कला की अक्षय निधि को भी लिये हुए है। बौद्ध काल का स्वर्णिम युग सम्राट देवानाप्रिय अशोक के कलिंग विजय के पश्चात् का समय है। जब उनके हिंसा से हाहाकार करते ज्वलित हृदय को भगवान् तथागत की कल्याणी वाणी से शान्ति मिली थी; और उन्होने उस उपदेश सुधा को "धम्म सरण गच्छामि" कहकर वसुधा पर वितरित किया था। शान्ति की उस वेला में कला का पूर्ण विकास हुआ। मजु मनोहर शिल्पकला और चित्राकन के उत्कृष्ट प्रतीको को पा सस्कृति मुस्कुरा उठी। उस विशाल राज्यावधि में अन्तर्राष्ट्रीय कलाकारो का आह्वान हुआ होगा, क्योंकि विशुद्ध भारतीय निर्माण शैली के अतिरिक्त अन्य शैलियो की भी कुछ झलक इन कला कृतियो में दिखाई देती है।



# बौद्ध युग और कला

भारत में धर्म, साहित्य एव कला का अति निकट सम्बन्ध सदा से रहा है। जो साहित्य में पढ, सुन या मनन कर प्राप्त होता है। वह कला में साकार या पूर्ण रूप से सामने आता है। कला अर्थात् यहाँ पर शिल्पाकन एव चित्रण की ओर मानव मात्र की स्वाभाविक अभिरुचि होती है। क्योकि मानव सदैव सुषमा का पुजारी रहा है। प्रत्येक युग अपने साहित्य के साथ कला की अक्षय निधि को आज भी सँजोये है। प्राचीन मूर्तिकला मजुल भावनाओ को समेटे अतीत की मूर्तिगत स्मृति है। इसी तरह बौद्ध युग भी जहाँ एक ओर पालि साहित्य के भडार को पूर्ण किया है, वहाँ कला की अक्षय निधि को भी लिये हुए है। बौद्ध काल का स्वर्णिम युग सम्राट देवानाप्रिय अशोक के कलिंग विजय के पश्चात् का समय है। जब उनके हिंसा से हाहाकार करते ज्वलित हृदय को भगवान् तथागत की कल्याणी वाणी से शान्ति मिली थी; और उन्होने उस उपदेश सुधा को "धम्म सरण गच्छामि" कहकर वसुधा पर वितरित किया था। शान्ति की उस वेला में कला का पूर्ण विकास हुआ। मजु मनोहर शिल्पकला और चित्राकन के उत्कृष्ट प्रतीको को पा सस्कृति मुस्कुरा उठी। उस विशाल राज्यावधि में अन्तर्राष्ट्रीय कलाकारो का आह्वान हुआ होगा, क्योकि विशुद्ध भारतीय निर्माण शैली के अतिरिक्त अन्य शैलियो की भी कुछ झलक इन कला कृतियो में दिखाई देती है।

सारनाथ, साँची, अजन्ता, बाघ, भरहुत, अमरावती आदि में मूर्तिकला एव चित्राकन आदि के उत्कृष्ट उदाहरण शोभित है। सारनाथ के गौरवशाली अलोक स्तम्भ पर निर्मित चतुर्मुखी सिह मूर्ति और उसके नीचे के वृषभ, अश्व और हाथी की मूर्तियाँ शिल्प कला की अनुपम वस्तुयें है। वहाँ ये धार्मिक एव ऐतिहासिक महत्व से भी पूर्ण है। भगवान् बुद्ध के प्रतिमा पार्श्व में निर्मित सिह-मूर्ति उनके गौरव एव शान्ति का प्रतीक है। उसी तरह स्तम्भ पर निर्मित शार्दूल भी।

साँची के शिला स्तम्भो, तोरण द्वारो, में भी सीधी तिरछी बकिम खोदाई द्वारा जातक कथा का अकन, विभिन्न मुद्राओ में भावनाओ का प्रगटीकरण प्रभावोत्पादक तथा अतीत के कला सौंदर्य से पूर्ण है। बाघिनी (नदी) के पुलीन पर गौरवशाली मालव प्रदेश में महू स्टेशन से सतान्वे मील दूरी पर स्थित बाघ गुफायें जो पाषाणो को काट कर बनाई गई है। बीहड कान्तार में बौद्ध काल की कला को अचल में समेटे साधिका सी लीन है। बसत की वनश्री अरुण पलाश पुष्पो को बिखेर कर मानो उसके अतर के देवता की अर्चना कर धन्य हो जाती है, और वर्षा की लहराती तरगो से उनका चरण पखार कर बाघिनी (नदी) सतोष का साँस लेती है। यहाँ की गुफाओ में शिला-भित्तियो पर अकित पद्म पाणि बोधिसत्व की विभिन्न मुद्रायें जैसे त्याग एव शान्ति का उपदेश दे रही है छठी सातवी सदी में यह स्थान पावन सूत्रो की मगल ध्वनि, धूप दीप के सौरभ से पूर्ण कितना उल्लासमय रहा होगा। जब विहारो के हेतु हमारे पूर्वज माहिष्मती नरेश सुबन्धु ने समीप की भूमि के

आम अर्पित करके धन्य माना था। यहाँ के स्तम्भो पर भी खुदाई के उत्कृष्ट कार्य हैं। कही कही मानव की अन्य भावभगिमायें भी सुन्दर सफल ढग से अकित है।

और, दक्षिण भारत का कला निकेतन अजता तो बौद्ध कला एव चित्राकन के अति सुन्दर समन्वय का अनन्य रूप है। महाकारुणिक भगवान तथागत के जीवन काल की घटनायें तो मानो उन कलाकृतियो में साकार हो रही है। पद्म, तडाग, पशु, पक्षियो, वृक्षो, पत्र-पुष्पो के चित्रण भी सुन्दर रूप से पृष्ठ भूमि सज्जा के लिये सजाये गये है। जो दर्शनीय हैं। जहाँ का कण कण मनोरम कलाकृतियो को लिये हुए शान्ति एव मैत्री की मृदुल भावनाओ का सदेश दे रहा है।

शिल्पी की हथौडी और छेनी से, चित्रकार की तूलिका से विभिन्न मनोरम रगो से मजु मुद्राओ में निर्मित व अकित प्रभावपूर्ण कलाकृतियाँ जिनका विषय करुणा मूर्ति तथागत की जीवन घटनायें व उपदेश है। तथा चित्रण व निर्माण को आदर्श बनाने के हेतु दया, प्रेम, त्याग व ममता मैत्री की पावन प्रेरणा दे रही है। धर्मानुरजित इन कला प्रतीको के दर्शन से हृदय श्रद्धा विभोर हो जाता है। बौद्ध युग की सफल कलाराधना अतीत के गौरव के अक्षय भडार को भर उस युग का और उनके पावन उपदेशो का यशोगान कर रही है।

अन्य भी कला कृतियाँ भूमि गर्भ में दबी चिर सुप्त निशानी सी शान्ति पूर्ण पडी हैं। आधुनिक उत्खनन कार्य जिन्हें प्रकाश में लाकर स्वर्णिम अतीत के प्रति अपनी श्रद्धाजलि अर्पित कर रहा है।

हाल ही में रेवा (नर्मदा) नदी के तट पर माहिष्मती के समीप बौद्ध कालीन स्तूप का पता लगा है। जिमकी ईंटे २१ इच लम्बी ११ इच चौडी और तीन इच मोटी हैं। इन पर अशोक कालीन लिपि में कुछ अकित है। मृत्तिका के रग विरगे पात्र-खड आदि वहां से प्राप्त वस्तुयें मनोरजन के साथ सस्कृति को बौद्धकालीन कला-राधना की अनुपम निधियां प्रदान करेंगी।



बौद्ध कला-कृतियाँ--



उज्जैन की भर्तृहरि गुफा का
प्रवेश द्वार



उज्जैन स्थित स्तूप का एक ध्वसित भाग

# उज्जयिनी

नीरव मृण्मय ढूहो में, सोई शेष कहानी ।

आसू के दो बूंद समर्पित, प्रियदर्शी की रानी ।।

दूर सुदूर तक मालव की शस्य श्यामला धरिणी के मनहर खेतो में जहाँ सलोनी मदभरी अल्हड़ तरुणियो के कजली के स्वर वर्षा की रिमझिम के साथ एकाकार हो जाते हैं। वसत में आम्र नीम की मजरियाँ सौरभ विखेर देती हैं, उज्जयिनी से ४-५ मील दूर ऐसी नीरवता में एक ढूह आज भी कई कथाओ को सँजोये है। ववूल के चार पाँच वृक्ष कुछ झाडियाँ पीत पुष्पो को जैसे उनकी अर्चना के हेतु विखेर देती हैं। यह स्थल है "वैश्या टेकरी"। प्रियदर्शी की वैश्या रानी (विदिशा की श्रेष्ठि कन्या देवी) के नाम पर कई किम्वदन्तियाँ प्रचलित हैं। पर सव का तात्पर्य यही निकलता है कि देवी यहाँ रहती रही हो या अर्चनार्थ आती रही हो।

आज तो केवल मृण्मय ढूह ही अपने अतर में जाने क्या क्या रहस्य छिपाये खड़ा है। जो पुरातत्व द्वारा उत्खनन के पश्चात् ही प्रकाश में आयेगी। उज्जैन के कोलाहल पूर्ण वातावरण से दूर इस टेकडी पर से सध्या की धूमिल वेला से नभ में चमकते नक्षत्रो और उज्जयनि की विद्युन्माला की शोभा वड़ी मनहर एव मुग्धकारी प्रतीत होती है।

प्रिय दर्शी अशोक जव शासन का प्रथम पाठ पढने उज्जयिनी आये थे तो पुण्यमयी देवी भी उनके साथ आई थी। यहीं महामहेन्द्र

एव सघमित्रा का जन्म हुआ था। उस स्वर्ण काल में कितन स्तूप विहार वने होगे।

जातक, महावस्तु, मज्झिम निकाय, ललित विस्तर में वौद्ध कालीन उज्जयिनी का स्वर्णिम युग झांक रहा है। भगवान के समय में ही जातक, कथासरित्सार की प्रणयिनी वासवदत्ता के पिता अवती नरेश चडप्रद्योत के पुरोहित महाकात्यायन ने त्रिरत्न के उपदेशो से मालव की घरा को धन्य कर दिया था। फिर सम्राट देवानाप्रिय अशोक के युग में उज्जयिनी, विदिशा ही क्या समस्त मालव को पुन मगलमय उपदेश सुधा प्राप्त हुई।

मालव की राजधानी उज्जयिनी में देवी का यह स्थान, पुरातत्व, इतिहास एव धर्म के दृष्टिकोण से दर्शनीय है ही। ऐसी कितनी ही उत्कृष्ट वौद्धकालीन शिल्पकला की वस्तुयें, स्तूप विहारो के अवशेष यहाँ भूमि गर्भ में छिपे पडे हैं।

"वैश्या टेकरी" से नगर में आने पर महाकाल एव हरसिद्धि के प्राचीन मदिर दर्शनीय हैं, वीर विक्रम की आराध्य देवी हरसिद्धि का मन्दिर तान्त्रिको का सिद्धि पीठ है। कहा जाता है कि यहाँ सती की केहुनी पडी है नवरात्रि में इसकी शोभा मुग्धकारी होती है।

मदिर के समीप "चौवीस खम्भा" नामक महाकाल वन का प्रवेश द्वार है जहाँ १२ वी सदी का अन्हलपट्ठन के राजा का शिला लेख लगा था। इन मन्दिरो के समीप वनराजि की सुषमा से शोभित शिप्रा का सुन्दर घाट है। कुछ दूर उत्तर की ओर जाने पर मारवाड के वीर दुर्गादास की छत्री (समाधि) भी ऐतिहासिक स्थल है।

उत्तर की ओर सरिता तट पर जाने के पश्चात् योगी भर्तृहरि की गुफा है। सुन्दर प्राचीनता की झलक ली हुई। आगे चलकर भैरोगढ जेल सम्राट अशोक के समय का वदीगृह है। उसी ओर ४-५ मील दूरी पर यात्रियो का आकर्षण केन्द्र कालियादाह महल है। पहले यह सूर्यमदिर था। ४०० वर्ष पूर्व माण्डू के सुलतान नासिरुद्दीन खिजली ने इसे महल के रूप में परिवर्तित कर दिया। अकवर, जहाँगीर, टामसरो ने भी इसका अच्छा वर्णन किया है। वनराजि के अक में यह शिप्रा तट पर रमणीक स्थान है। ग्वालियर नरेश माधवराव शिंदे ने इसे और सुन्दर वनवाया। यहाँ महल के पास ५२ कुन्डो में शिप्रा का जल इधर उधर वहता है। जो मनोमुग्धकारी है।

इनके अतिरिक्त जयपुर नरेश सवाई जयसिंह का वनवाया हुआ मान-मन्दिर अथवा वेधशाला शिप्रातट पर ऊँचे स्थान पर अवस्थित है।

श्री कृष्ण जी ने शैशव में सदीपन गुरु के समीप वैठ जहाँ शिक्षा पाई थी वह सुरम्य स्थल अकपात के नाम से जाना जाता है। जहाँ धार नरेश ने एक सुन्दर मन्दिर का निर्माण करा दिया है। समीप ही एक प्राचीन कुन्ड भी है।

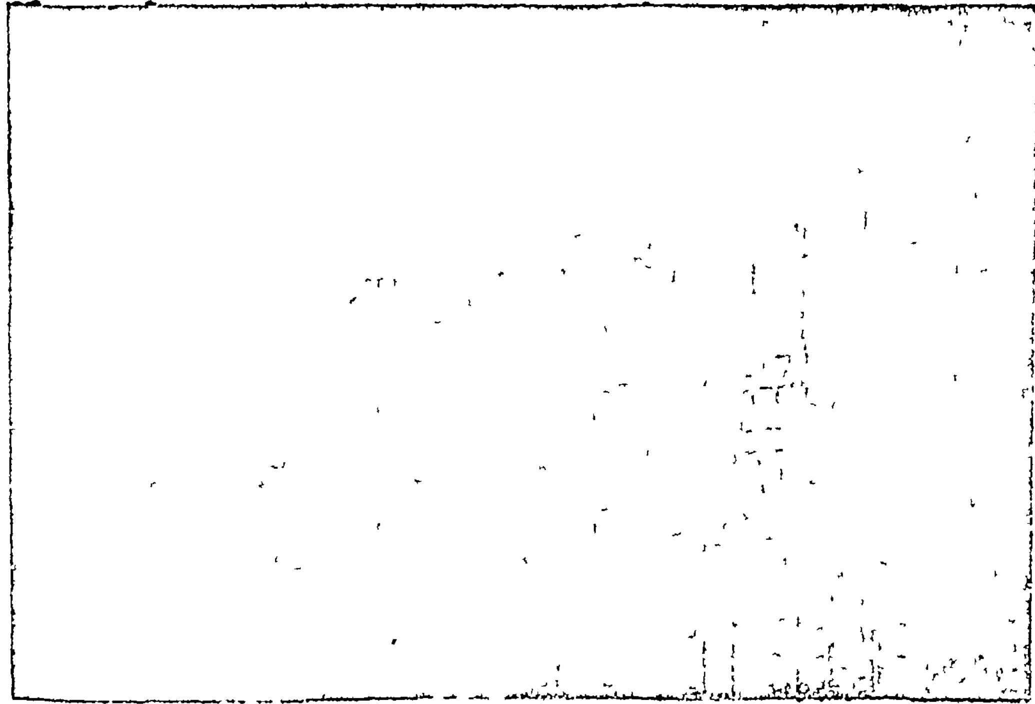
"भर्तृहरि की गुफा" के समीप कवि-कुल-गुरु कालिदास की आराध्य देवी कालिका जी का मदिर है। यहीं पर पुरातन अवन्ती की अमूल्य निधियाँ भूगर्भ में दवी पडी है। एक स्थान पर खुदाई कराने से पुरातन सिक्के एव पात्र प्राप्त हुए हैं। यहाँ शिप्रा तट की झाडियाँ वडी मनोमुग्धकारिणी हैं।

इनके अतिरिक्त मगलनाथ, विना नीव की मसजिद, प्राच छतरियाँ, योगेश्वर टेकरी, आदि अनेकानेक स्थल है।

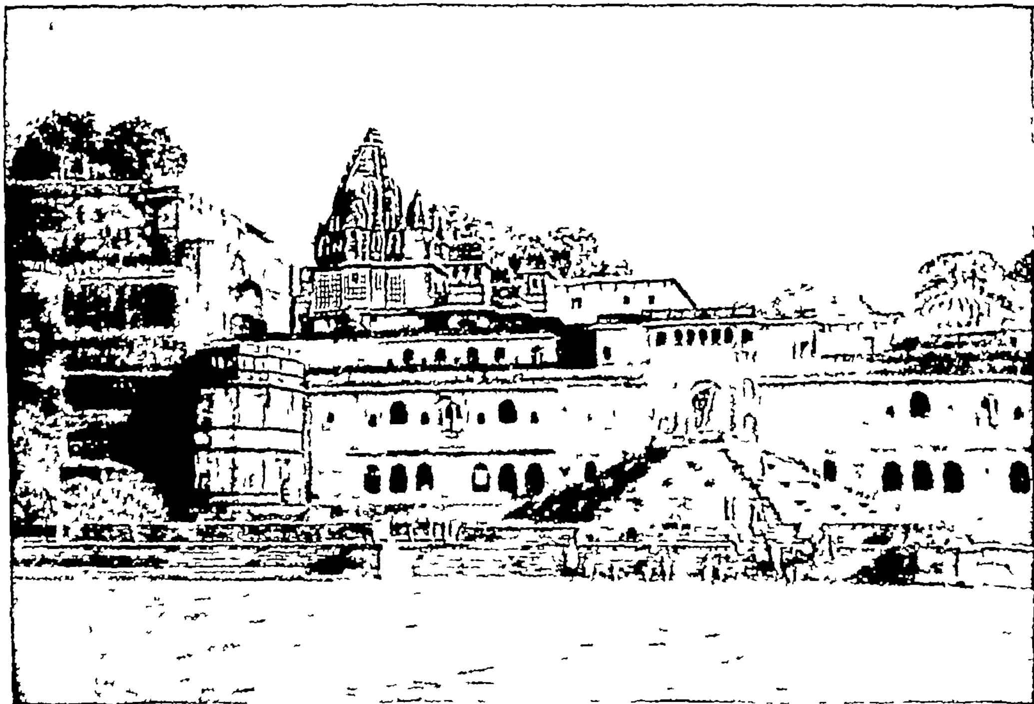
उज्जैनी में आज वीर सम्राट प्रद्योत, धर्म सदेश गुजित करने वाले कात्यायन, सम्राट देवानाप्रिय अशोक, व उनकी महारानी पुन्यमयी देवी तथा विक्रमादित्य एव कालिदास के समय का वैभव नही, जब धवल स्फटिक के सुपमाशाली राजनिकेतनो से ककण-किंकिणियो की स्वर लहरियाँ कल्पनातीत वैभव को साकार करती थी। गृह-गृह में अर्चन-वन्दन के स्वर धार्मिक भावना व शान्ति का सदेश देते थे। कज कलिकाओ सी सुकुमारियाँ मेघ हास पर लहराती शिप्रा की उर्मिल उर्मियो से क्रीडा करती थी। अगरु धूम्र से धवल श्याम सुरभित समीर के साथ त्रिरत्न के उपदेश गुजित होते थे। मालव की राजधानी भगवान् के कल्याणकारी उपदेशो में विभोर थी।

किन्तु, आज भी बौद्धकाल की चिरसुप्त निशानियो को सजोई प्राचीन उज्जयिनी वनराजी के मनहर अक में शिप्रा की मूक लहरियो से विश्वदेव की अर्चना करती पावनशील पालन की प्रेरणा प्रदान करती है, और भावुक मन उस सुषमा को निहार कर गुनगुना उठता है।

जयति जयति भुवि भारत मध्ये, सुखदो मालव देश ।
तरुवर राजि विराजित कुसुमित, शोषित सुन्दर वेश ॥



बौद्ध कला-कृतियाँ—



# माहिष्मती

माहिष्मती विदिशा ह्यवन्ति, धारा दशपुर ग्रामै ।
हर्षाऽशोक भर्तृ हरि-विक्रम-भोज नृपैरभिरामै ॥
सुजल सुफल शुभ शस्य भूषित विमल यत्परिवानम्, ।
प्रकृति शुषमया पूरित मभितो, जन रजन सस्थानम् ॥

प्राकृतिक अचल में सौन्दर्य शालिनी निर्मला नर्मदा (रेवा) एव मनोहारिणी महेश्वरी सरिताओ से द्वीप सी वनी सुन्दर नगरी माहिष्मति वर्तमान माहेश्वर युग-युग की सस्कृतियो को सँजोई कितने ही उत्थान पतन को देख चुकी है। उक्त सरिताओ ने नगर को कई भागो में विभक्त कर दिया है। जहाँ उच्च स्थलो पर जन समह भी निवास करता है।

इस ऐतिहासिक नगरी को माहिष्मान नामक नरेश ने वसाया था। प्रसिद्ध (हैहय) क्षत्रिय नरेश कार्तिवीर्य अर्जुन ने नागवशी राजाओ को पराजित कर माहिष्मती में अपनी राजवानी वनाई, इन्हे ही अत्यन्त पराक्रमशाली होने के कारण सहस्रवाहु की उपाधि थी। भार्गव परशुराम से युद्ध के पश्चात हैहय शक्ति का दास हुआ, और माहिष्मती का महत्व घटता गया।

कालान्तर में पुन अवन्ती-नरेश चड प्रद्योत के समय में माहिष्मती का वैभव चरमोत्कर्ष पर पहुँचा। भगवान की कल्याणी वाणी को उनके शुभ जीवन काल में ही महाकात्यायन ने मालव प्रदेश में प्रसारित किया, और तत्कालीन माहिष्मती के क्षत्रीय नरेशो ने

त्रिरत्न की शरण में जा अपने को धन्य माना। सुख, शान्ति, समृद्धि वृद्धि की लहरियो से यह महान नगरी पुन विभोर हो गई। इसी राजवश में छठवी शताब्दि में हमारे पूर्वज विख्यात नरेश सुवधु हुये, जिन्होने बौद्ध कालीन कला के प्रतीक बाघ की गुफाओ में निवास कर, जन-जन को उपदेश सुधा वितरित करने वाले पूज्य भिक्षुओ के निर्वाहार्थ समीपस्थ भू-भाग को अर्पित किया था, और मगल-मय उपदेशो का पालन करते हुये अपने जीवन को धन्य माना था।

बौद्ध काल की इस स्वर्णिम राजधानी के साथ विदुषी भारती (मडन मिश्र की पत्नी) की कथा नारी-जाति को गौरवान्वित करती है। जिसने दिग्विजय की आकाक्षा रखने वाले विद्वान शकराचार्य को शास्त्रार्थ में पराजित कर इतिहास में अनुपम उदाहरण रखा। तत्पश्चात् रानी अहिल्या होलकर भी माहिष्मती के साथ सदैव याद रहेंगी।

केवल इतिहास ही नही, पुरातत्व एव धर्म की दृष्टि से भी यह नगरी आकर्षक है। दिसम्बर सन् ५२ से मार्च सन् ५३ तक राजकीय आदेशानुसार माहेश्वर एव समीपस्थ चार टीलो में विभिन्न स्थानो पर खोदाई के पश्चात् ढाई हजार वर्ष पूर्व की सस्कृति की वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं। धरातल से १०० फीट की गहराई पर तीस फीट मोटे पीले रेत से ढके हुए छोटे हथियार, कुल्हाडी, गडासे, जैसे औजारो के खड प्राप्त हुये, इन पर जमी हुई बालुका राशि सीमेन्ट की भाँति है। इन वस्तुओ के आधार पर विदित होता है कि तब



महेश्वर स्थित नर्मदा की सहस्रधारा

नर्मदा दो मील चौडी रही होगी। वर्षा की कमी के कारण धीरे-धीरे धारा सिमटती गई।

पीली वालुका राशि को आच्छादित की हुई काली मिट्टी में कीलें, नुकीली, एव खुरपी सी तीक्ष्ण धार वाली वस्तुएँ प्राप्त हुई ये हथियार सूर्यकान्त तथा सुलेमानी प्रस्तर से निर्मित हैं। जो स्फटिक की भाँति उज्ज्वल एव चमकीले हैं। इन विकसित युग के परिचायक शस्त्रास्त्रो से मानवो की नगरी आदि में निवास की बात स्पष्ट होती है। लगभग २० फीट की गहराई में चमकते पाषाणो के चाकू विभिन्न रगो के मृत्तिका पात्र सुन्दर माला के मन के प्राप्त हुये हैं। पात्रो के गिलास तश्तरियो पर श्वेत, अरुण पृष्ठभूमि पर काले रग से प्राणियो एव मानव चित्रो को अकित किया गया है। हथियारो के फन, अस्थियो व लकडियो व कुशलतापूर्वक वनाये गये हैं। राजदड का शीर्ष भाग, पत्थर की गेंदे अति सम्यता की द्योतक हैं।

तीसरी सस्कृति का अतिम भाग बौद्ध कालीन श्रेष्ठ सस्कृति काल का परिचायक है। माहेश्वर एव समीपस्थ टीला नर्वदा टोली के उत्खनन से प्राप्त सूर्यकान्त, नील मणि, पीत एव अरुण पाषाणो के मनके तत्कालीन शृगार उपकरण की अनुपम वस्तुयें है। सीलें, मुद्रायें, मुहरें, विभिन्न कलात्मक पूर्ण चित्रित मृत्तिका पात्र जलकलश, चषक तश्तरियाँ, काली भूरी, रजत रोगन से शोभित है। ऐसी वस्तुयें उज्जैनी से कुमारी अतरीप तक पाई गई है। भवन निर्माण के हेतु सुदृड ईंटो का प्रयोग होता था और प्राचीरो तथा स्तम्भो पर सुन्दर अकन भी। नवदाटोली के ८५ फीट व्यास के

ध्वसावशेष इसके प्रमाण है। माहेश्वर एव इन समीपस्थ स्थानो से प्राप्त पात्रादि पर कमल, वृषभ का मनोरम अकन है।

प्रतीत होता है रेवा नदी के भारी बाढ से स्तूप व नगर नष्ट-प्राय हुये। जो माहेश्वर के मध्य विशाल जलाशय से प्रकट होता है। माहेश्वर में मिले वहाँ निर्मित होने वाले चमकदार मृत्तिका के मदिरा पात्र, सुराहियाँ तत्कालीन कला प्रियता तथा वैभव की द्योतक हैं। रेवा के पुलिन प्रदेश में माहिष्मती और निकट ग्रामो में प्राप्त इन निधियो से प्रमाणित होता है कि त्रिरत्न की शरण में मगलमय-पथ का अनुशरण करती जनता यहाँ बहुत बडी सख्या में थी। तब इस विशाल स्तूप की भाँति बहुत से स्तूप विहारो से यह स्थली शोभित थी। किन्तु अब भूगर्भ से प्राप्त पुरातत्व की निधियाँ अतीत के वैभव की शेष कथायें कहती हैं, साथ ही यह प्राग ऐतिहासिक, बौद्ध स्वर्णिम युग के उल्लास की घडियाँ देखी हुई नगरी उस भावी की ओर निहार रही है। जब सप्ट सगायन से वरदान स्वरूप पुन देश देशान्तर करुण मैत्री के जयगान से गुजित हो उठेंगे और यह भी अपने अतीत के वैभव को साकार रूप में प्राप्त कर सकेगी।

पूर्ण होगी कल्पनायें
रच नये आख्यान मनहर

× × ×

युग वर्ष बीतेंगे ही सत्वर

# कसरावद

· कलकल निनादिनी रेवा के पुलिन पर स्थित (माहेश्वर) (प्राचीन) माहिष्मति जो बौद्ध काल में अपने वैभव गौरव के साथ मुस्कुरा रही थी। त्रिरत्न की उपदेश सुधा में विभोर थी। अतल गहराई पूर्ण सुनील जलराशि वाली रेवा नदी (नर्मदा) के तट पर जहाँ नवदा टोली नामक प्राचीन प्रसिद्ध स्थान है जहाँ स्वर्णिम युग के सुन्दर विहार व स्तूपो के अवशेष प्राप्त हुये है, वहाँ की सुन्दर ईंटें, मृत्तिका पात्र भक्ति भावना एव कला के प्रतीक बने पुरातत्व प्रेमियो के आकर्षण के केन्द्र है। इसी माहेश्वर की विरुद्ध दिशा में अर्थात् रेवा के दूसरे तट पर कसरावद ग्राम के समीप प्राचीन स्तूपो के तथा विहारो के ध्वसावशेष आज भी अतीत की स्मृतियो को सजो रहे है।

कसरावद, तरुवर राजि विराजित शोभित सुखदायिनी मालव धरा पर स्थित एक ग्राम है। महामालव (आधुनिक मध्य भारत) के निगाड जिले में रेवा के दूसरे तट पर कुछ दक्षिण की ओर विद्यमान है। आगरा बाम्बे रोड पर अवस्थित जुलपानिया ग्राम से बस द्वारा 'खरगोन' कस्बा जाना पडता है। कसरावद जो कि कसरावद तहसील का ही सदर मुकाम है, खरगोन से वहाँ पब्लिक बसो द्वारा पहुँचते हैं।

दूसरा पथ मध्यभारत की ग्रीष्मकालीन राजधानी इदौर से मडलेश्वर तक बस द्वारा जा, फिर नर्मदा को पार कर कसरावद

पहुँच सकते हैं, किन्तु नदी का पार करना सुविधा जनक नही है।

कसरावद ग्राम के आसपास के क्षेत्र में मनहर वन्य प्रान्त में आम्र, बवूल के बौर व पीत-पुष्प, मल्लव अपनी शोभा से विभिन्न ऋतुओ मे सौरभ, एव सुपमा प्रदान करते हैं। वसत में पीली सरसो से खेलती, वर्षा में कजली की धुन पर वल खाती मालव तरुणियाँ गीतो की गुनगुनाहट, और यत्र तत्र बिखरे स्तूप विहारो के कला पूर्ण ध्वसावशेष एक कसक के साथ भावुक मन को अतीत की स्मृतियो में विभोर कर देते हैं। जब झीनी साडियो की नगरी माहिष्मती के समीप कसरावद भी अपने वैभव के युग देखा होगा। आज जहाँ धरा पर एकाकार होते भूमिगर्भ में अतीत कालीन कला सस्कृति अनुपम वस्तुओ को समेटे भग्नावशेष, स्तम्भो के टुकडे, तोरण ईंटो के रूप में बिखरे पडे हैं। वहाँ सम्राट देवानाप्रिय अशोक के स्वर्णिम युग में विहारो के पावन जीवन व्यतीत करते कापायधारी पूज्य भिक्षुगण जन जन में भगवान की उपदेश सुधा को वितरित करते रहे होगे, तथा शीलो का अनुशीलन कर प्राणीमात्र सुखी थे। आज भी रग विरगे विहगो के साथ कोकिला का मधुर तान मधु ऋतु में प्रतिध्वनित हो उस शान्त कानन अचल में जैसे शील पालन की प्रेरणा करता है।

यहाँ पुलीन स्थित पावन ध्वसावशेप पुरातत्व की दृष्टि से ही दर्शनीय नही किन्तु इतिहास व प्रकृति प्रेम तथा धर्म भावना से भी है।

৩

# कलाकेन्द्र-धमनार की गुफायें

परिवर्तन के श्याम घनो के वीच कभी कभी मजु रश्मियो सी अतीत की वैभवमयी कहानी नवयुग में चमक उठती है। और कला की भव्य धूमिल कृतियाँ साकार हो उठती हैं। भूली कहानियाँ कल्पना के रजत हेम पखो पर उड वरदान सी श्रद्धामय हो, उल्लास, कमक, माधुर्य भर देती हैं। कलाकार की अभिलाषा, श्रद्धा भावना तूलिका द्वारा अरुण, पीत, हरित आदि मनोरम रगो और छेनी हथौडी के सहारे चित्र फलक एव पाषाणो पर मूर्तिमत हो जाती है। तभी चित्रित भाषा अमरत्व का अधिकार चाहती, आज भी गिरी निकुज की नीरवता मे मौन खडी है। चचल चर्मण्यवती, शीतल शिप्रा, विमल वेत्रवती की मजुल उर्मिल वारि तरगो से परिप्लावित महामालव प्रदेश में नाग, असुर और वौद्धकाल के अनेक राजाओ की क्रीडाभूमि में आज भी अतीत का गौरव झाँक रहा है, वहाँ के नर्मदा तक के उत्खनन कार्य मे ८५ फीट व्यास के स्तूप के ध्वसावशेष और मृत्तिका पात्रो ने हमें वौद्धकाल के उच्चतम कौशल के दर्शन होते हैं।

उसी तरह इस प्रदेश के मदसौर जिले में पश्चिमी रेलवे के नागदा मथुरा लाइन पर स्थित श्यामगट स्टेशन से तेरह मील की दूरी पर नीरव कान्तार के मध्य तीन मील की परिधि में पहाडी के शान्त और एकान्त वातावरण में भावना की तरगो, कलाराधना की रेखाओ को समेटे धमनार की साठ सत्तर गुफाये रगो की भाषा में अभि-

व्यजित बौद्ध युग के स्वर्णिम अतीत का यशोगान कर रही है। उस काल की डेढ सौ गुफाओ में अब केवल चौदह ही महत्व पूर्ण रह गई हैं। यहाँ के मुख्य गह्वर में करुणा एव मैत्री के प्रतीक भगवान तथागत की भव्य एव विशाल प्रतिमा सिंहासन पर आसीन है। जिनकी उपदेशमयी मुद्रायें आज भी प्राणि मात्र को शान्ति का सदेश दे रही है। इस मजुल मूर्ति के चारो ओर प्राचीरो पर अव-तरण, महाभिनिष्क्रमण, मारविजय आदि की दिव्य कथाओ के मनोरम चित्र नील गगन के नक्षत्रो की भाँति अद्भुत आकर्पण लिये हुये अतीत को प्रतिबिम्बित कर रहे हैं। इससे लगी हुई गुफाओ में चैत्य एव विहारो की विचित्र एकता है, कितनी ही भावपूर्ण मूर्तियाँ भावनाओ को मुखरित करती कानन के अचल में मौन पडी है।

श्रावण सध्या की मनोरम चित्रमयी उस शोभा स्थली में कभी प्रदीपो की झिलमिल आभा, धूप की श्याम लहरियो के बीच, वदना के स्वर गुजित होते रहे होगे। मगलमय उपदेशो में पावन मधुरिमा निखर जाती रही होगी। आज भी वहाँ उस विश्व वन्दित देवता की भव्य मूर्ति के चरणो में वनश्री सद्य कुसुमित सुरभित प्रसूनो की अजलि समर्पित कर धन्य हो जाती है। तब मानो जीवन को मगल मय पथ की ओर प्रेरित करती समीर लहरी गुनगुना उठती है

"भवतु सब्ब मगल।।"



# चम्पावती

वैदिक, वौद्ध, जैन सस्कृति की अनुपम वस्तुओ को धारण की मालव की सुषमा शालिनी प्रकृति के अक में चम्पावती नगरी धूल धूसरित पडी है। इसके अचल में कितनी ही कला पूर्ण प्रतिमायें विखरी पडी हैं। आम्र-वनो की सघन छाया, मजरियो की मधुर गध और उसके कोकिला की मीठी तानमयी वासती वनश्री मानव को मुग्ध बना लेती है। इस ग्राम के मध्य में वहने वाला नाला (प्राचीन सोमवती नामक छोटी सरिता) जो प्राय सूखता नही अपने कगार पर हरियाली एव विविध जल पुष्पो से विगत वैभव शालिनी नगरी की अर्चना करता सुरम्य प्रतीत होता है। ग्राम से दो मील पर प्राची की ओर एक छोटा-सा पहाडी निर्झर का जल सदैव झरता रहता है।

इस शोभाशालिनी नगरी के साथ अनेकानेक किम्वदतियाँ सम्मिलित हैं। किन्तु सवका तात्पर्य है कि यह आर्यावर्त के गौरव के प्रतीक वीर विक्रमादित्य के पिता महाराज गधर्वसेन की राजधानी थी वहाँ वे उज्जयिनी आने के पूर्व तक अपनी राजमहिषी के साथ रहे। तत्पश्चात् उज्जयिनी में वीर विक्रम का जन्म हुआ। इन्ही के कारण इसे गधर्व नगरी भी कहा जाता था जो अव अपभ्रश रूप मे गधावल गाम के नाम से मालव में प्रसिद्ध है। मध्य भारत के देवास जिले में देवास से भोपाल जाने वाले रास्ते पर सोनकच्छ नामक ग्राम से ६ मील दूर नीरव कान्तार में यह स्थित है। सोन-

कच्छ से गधावल तक रास्ता बीहड है। ग्राम के समीप कई मन्दिरों के ध्वसाविशेष हैं। इन देवालयो में लोग विविन्न देव मूर्तियां भी रख लिये है। इस क्षेत्र में भगवान् बुद्ध की कई मूर्तियां भी प्राप्त हैं, जो विभिन्न मुद्राओ में है। साथ ही कलापूर्ण भी। एक मन्दिर माता जी के मन्दिर के नाम से विख्यात है जहाँ अनेक मूर्तियो को सजोकर प्रस्थापित कर दिया गया है। ये पावन प्रतिमायें धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं ही, साथ ही ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भी। तत्कालीन वेश-विन्यास एव कला साधना का मनोहारी रूप इन विग्रहो में आज भी विद्यमान है। काश! इन पुरातत्व एव कला की अनुपम अज्ञात निधियो की रक्षा होती रहे ताकि परिवर्तनशील समय के साथ आने वाले शुभ अवसर पर दूर सुदूर के मानव भी अपनी श्रद्धा अर्पित कर सकें।

इन ध्वसावशेपो को देखकर उस अतीत की स्मृति जाग उठती है जब श्रद्धालु कलाकारो ने अपने हृदय की समस्त श्रद्धा को सँजोकर प्रस्तर खडो पर छेनी हथौडे के सहारे अपने आराध्य देव के पुनीत रूप को साकार करने का प्रयत्न किया था, कमनीयता तथा सुपमा को मूर्त रूप देने की साधना में अपने को धन्य माना था। विश्वदेव की उन गम्भीर कल्याण पथ प्रदर्शिनी पावन प्रतिमाओ के श्री चरणो के समीप श्रद्धानत, त्यागशील कापायधारी भिक्षुओ ने अर्चना वन्दना की सुमधुर ध्वनियो के बीच अगरुधूम की श्याम लहरियो से सुवासित वातावरण में त्रिरत्न की कल्याणकारी उपदेश सुधा को वरदान रूप में प्रदान किया होगा और चम्पावती अपने भाग्य पर गर्व करती शत-शत शोभा के साथ आलोकित हुई होगी।

आज भी उन पुनीत विग्रह को रिमझिम मल्हार के स्वर गाती वर्षा सरिता के रूप में अर्घ्य चढाती है। आम्र मजरियाँ मधुर गध लुटाती समर्पित हो जाती है, और हरे भरे पल्लव पुष्पो के परिधान से शोभित चम्पावती मानो उनके चरणो पर सिर झुका साधिका सी लीन हो जाती है। इस सुषमामयी नगरी में जहाँ इतने कलात्मक विग्रह है, न जाने कितनी पुरातत्व की निधियाँ अशेष कथाओ को लिये भूमिगर्भ में छिपी पडी है। उत्खनन के पश्चात् इस नगरी के ध्वस कोट (सीमा प्राचीर) के अतर्गत क्षेत्र में अतीत की कितनी ही कला कृतियाँ, ऐतिहासिक, सास्कृतिक वस्तुयें यहाँ प्राप्त होगी, जो अज्ञात है।



# उर्वशी के तट पर

कला और साहित्य के अक्षय भण्डार से पूर्ण बौद्ध काल के श्रद्धामय भव्य प्रतीक आज भी गर्व से अवस्थित स्वर्णिम युग के शान्तिमय स्वर्गिक सदेश को प्रसारित कर मगलमय पथ की ओर प्रेरित कर रहे है। एक समय था जब सम्राट देवानाप्रिय अशोक त्रिरत्न की शरण में जा शान्तिलाभ किये थे और पाये थे अपनी आकाक्षा से अधिक। वे चाहते थे विश्व विजयी बनें, मानव मात्र पर विजय प्राप्त कर, किन्तु भगवान तथागत की कल्याणी वाणी को अपनाकर उन्होनें प्राणिमात्र के हृदय में स्थान बना लिया। इसी काल में उन्होने अनेक स्तूप, विहार, स्तम्भ, शिलालेख, और जनहित की वस्तुओ का निर्माण कराया। उन्होने उस महा-मालव प्रदेश में शासन का प्रथम पाठ पढा था। जहाँ उनका वीर हृदय प्रणयिनी विदिशा-कुमारी देवी के स्नेह से अनुरजित हो गया था और उन्होने अपने प्रिय पुत्र-पुत्री महेन्द्र एव सघमित्रा को धर्म की शरण में अर्पित किया था। उन्ही सम्राट के नाम पर बीना कोटा लाइन पर स्थित एक स्टेशन का नाम "अशोक-नगर" रखा गया है।

इस 'अशोक-नगर' नाम के साथ कितनी सस्कृतियो की स्मृतियाँ सजीव हो उठती है। कल्पना के स्वर्ण-रजत पखो पर उड कर अतीत साकार होने लगता है। इस अशोक नगर से ६ मील दक्षिण की ओर तुम्बवन के ध्वसावशेष तुमेन के नाम से अतीत के गौरव की याद, मूर्ति-कला की सुषमा, कितने ही राजवशो की

उत्थान पतन की कहानियो को, कितने ही हर्ष, उल्लास, कमक और श्रद्धा की निशानियो को अपने अचल में समेटे मौन पडा है।

सम्राट देवानाप्रिय अशोक के शासन काल में, उस स्वर्णिम युग में यह नगर तुम्ववन मजुल, धवल धौत हर्म्यों से पूर्ण अनुपम शोभा-मय था। उत्तराखड से गौरव शालिनी उज्जैनी के पथ पर व्यापार का एक उत्तम केन्द्र समृद्धि वृद्धि के माथ उस युग का यशोगान कर रहा था जव कि मालव प्रदेश सुख शान्ति का आगार था। चचल उर्मिल उर्वशी नदी के पुलीन पर तीन मील के क्षेत्र में स्थित इस नगर के गृह गृह में अर्चना, वदना, मगीत निगुन्जन से उल्लाम विख-रता था। ककण किंकिणियो की रणित ध्वनित स्वर लहरी के साथ वन्दना के हेतु जाती सुकुमारियो की श्रद्धा से तुम्ववन का कण-कण मधुरिमा से व्याप्त हो जाता था।

उस कचन महलो की नगरी में वैभव के साथ करुणा एव मैत्री के प्रतीक भगवान् तथागत की उपदेश सुधा भी मगलमयी सरसता प्रदान करती थी। पूर्णिमा की रजत किरणो के वीच स्वर्ण प्रदीपो की स्वर्णिम आभा से आलोकित विहार के प्रागण में निरत्न वदना के पावन स्वर, अर्चना के गीत गुजित होते रहे होंगे। जहाँ आज भी एक ही शिला की कलामयी चतुष्पदी मनोरम चौकी पर वनी भगवान् तथागत की दस फीट ऊँची छ फीट चौडी विशाल एव भव्य प्रतिमा ध्यान मुद्रा में अवस्थित करुणा, मैत्री एव शान्ति की पावन प्रेरणा दे रही है। कमल, पत्र पुष्पो एव मानव की विभिन्न मुद्राओ का अकन पृष्ठ-भूमि सज्जा के लिये बनाया जाकर शिल्प सौन्दर्य की उत्कृष्ट वस्तुयें अर्पित की गई हैं। समीप ही महामाया विन्ध्य-

वासिनी का मन्दिर प्राचीरो एव स्तम्भो पर प्रणयकला के अनुपम चित्रण को लिये खडा है। यह मदिर अति प्राचीन है। देवी की मूर्ति भी सौम्य एव वहुत समय पूर्व की है।

इस तीन मील के क्षेत्र में कुँआ, वावडी, भव्य भवनो के अवशेप एव भावमयी मूर्तियाँ यत्रतत्र विखरी अतीत के वैभव गौरव के आख्यान को दुहरा रही हैं।

अब वहाँ की मजुल हरित धरणी पर प्रासाद, राजपथ, वीणा, मृदगनिनाद उल्लास हास, कल कूजन नही है किन्तु आज भी शरद चन्द्र की मृदुल चाँदनी अपनी मधुरिमा विखेर कर उर्वशी के तट पर स्थित विश्वदेवता ( भगवान् तथागत ) की अर्चना में आलोकित रहती है। अरुण उषा की चमक द्युति में समीर लहरी मृदुल-मृदुल शत-शत सुरभित सुमनों को उनकी भव्य प्रतिमा के चरणो में बिखेर कर धन्य हो जाती है। प्रकृति वनमाला सी शोभित हो वन्दना करती है, और कोकिला कूक पडती है। आसाढ सावन के सजल मेघ जब झुक जाते हैं तब उर्वशी जल से उन्हें अर्घ्य देती है, और भावुक मन कल्पना के पखो में उडकर अतीत की स्मृतियो को साकार पा, नीरव शान्त वातावरण में श्रद्धा से नत हो जाता है। हृदय किसी कविता की इन पक्तियो के साथ मानो गुनगुना उठता है--

विभा विहगम के स्वर भरते, प्रात महिमा कूजित।
भग्न खडहरो की रानी तुम, अब भी लगती पुजित।

वसत की माधवी ऋतु में होने वाला मेला प्रतिवर्ष आकर उर्वशी तट के उस स्वर्णिम युग की याद दिला जाता है।

## बौद्ध कला-कृतियाँ--



तुम्बेन में प्राप्त बुद्धमूर्ति सहित एक कलाकृति

करती थी। तब महाकवि भवभूति की यह स्थली तक्षशिला व नालदा सी सास्कृतिक केन्द्र बनी हुई थी। सुदूर देशो के विद्यार्थी वहाँ आते और शिक्षा प्राप्त कर एव धर्मज्ञान ले जीवन को धन्य मानते थे। आज भी पारा (पार्वती) नदी और सिन्धु की निर्मल उर्मियाँ पावस की सलोनी ऋतु में अपने पुलिन विहार के भग्नावशेष तक लहरा कर चुपचाप सरक जाती है। जैसे महाकारुणिक की अर्चना में उस पावन-स्थल के चरण पखार श्रद्धा से नत हो जाती है। जहाँ सम्राट देवानाप्रिय ने शासन का प्रथम पाठ पढा था, जहाँ देवी की त्याग मयी गाथा अब भी गुजित है, उसी महामालव के ग्वालियर-शिवपुरी पथ पर नागो की नगरी पद्मावती (पवाया) वीहड, कान्तार के मध्य उपासना में लीन सी विद्यमान है, किन्तु वहाँ के विहारो के भग्नावशेष, यत्र तत्र प्राप्त देव-विग्रह, स्तम्भ, तोरण-द्वारो के टुकडे आज भी पद्मावती के वैभव को, उस युग की स्मृतियो को उभार देते हैं। जब पारा का सुरम्य पुलिन अगरु धूप की श्याम लहरियो से सुरभित रहा होगा, पावन-सूत्रो और अर्चना को मगलमयी ध्वनि से पूरित हो वहाँ के वैभव में उल्लास नि सरत रहा होगा, और अनुपम शान्ति का वह वातावरण महाकारुणिक की करुणा से प्लावित हो जीवन को धन्य कर दिया होगा।

आज भी वहाँ एक अलौकिक शान्ति है, सुषमा है। समय आयेगा और नागलोक की उत्खनित वस्तुयें नागवशीय के स्वर्णिम वैभव, बौद्ध कला प्रियता, विशुद्ध धार्मिक भावनाओ एव सस्कृति के पावन आकर्षक प्रतीक अर्पित करेगा। उत्खनन कार्य से प्राप्त वस्तुयें इसके उज्ज्वल भविष्य की ओर सकेत करती हैं, अभी तो इस कान्तार

बौद्ध कला-कृतियाँ--



तुम्वेन से प्राप्त बुद्ध-मूर्ति

# खेजड़िया-भोप

—सुखी होयगो मालवो म्हारो

मन में राखो पतियारो, सुखी होयगो मालवो म्हारो,
वइ से रग-बिरगी चुनरी का आचल लहराया,
बइ से रग-बिरगा बादल उठी उठी ने छाया,
ऐसी रग-बिरगी खेती, हियो भराइ जाय थारो,
सुखी होयगो मालवो म्हारो

एक दिन आयेगा इन ग्राम-गीतो के मालव प्रदेश में पुन सुख सौभाग्य का वरदान प्राप्त होगा। पूर्व से उठते शुभ सदेश के बादल अभिनव मगाय्न के रूप में उपदेशामृत की सुधा वर्षा करेंगे, क्या, मगध, क्या मालव विश्व को अभिनव अनुपम शान्ति प्राप्त होगी। जन-जन को मगलमय पथ की प्रेरणा मिलेगी।

मालव के इन ग्राम गीतो के गूजते कानन में, वरदा चम्बल की कलकल निनादिनी धारा जैसे सुख-सन्देश दे रही है। चम्वल बँधकर नवीन हरियाली, सुषमा का निर्माण करने जा रही है। वहाँ दशपुर के अचल में अतीत की वस्तुयें भी प्रदान की, काले-काले मेघो के बीच छन-छन कर आती आलोक रश्मियो की भाँति खेजडिया भोप के पावन स्तूप एव घमनार की मनोरम गुफायें पुरातत्व प्रेमियो के सन्मुख आई।

हिंसा में रत मध्य-एशिया के वर्बर हूणो ने जव अहिंसा के पुजारियो को कष्ट देना प्रारम्भ किया तव करुणा मैत्री के आराधको

## बौद्ध कला-कृतियाँ—



तुम्वेन का प्रसिद्ध बुद्ध-मन्दिर

१०वी एव एकादस गुफाओ में दो लघु अलिंद साधारण कक्ष तथा चार कलापूर्ण स्तम्भ वाला एक विशाल कक्ष दर्शनीय है। इस कक्ष के तीन द्वार बडे सुन्दर ढग पर निर्मित है। सम्भवत इसके वैभव के युग में इस कक्ष में विश्वदेव के पावन उपदेश-सुधा को जन-जन में वितरित किया जाता रहा हो।

द्वादशवी गुफा तो मानो कला की उत्कृष्टता के अचल में समेटी, अनुपमता को साकार कर रही है। यह सम्पूर्ण गुफा एक मनोरम उपासनागृह के रूप में है जिसके मध्य में आठ फीट लम्बा, ८ फीट चौडा, और १५ फीट ऊँचा भव्य स्तूप निर्मित है। इस स्तूप के दोनो पार्श्व में दो सुन्दर वीथियां है। जिसके किनारे १० कलापूर्ण स्तम्भ और ६ कक्ष हैं। तृतीय कक्ष में दो मानव मूर्तियां समाधि की मुद्रा में हैं, चार कलामय प्रस्तर स्तम्भो से निर्मित मध्य कक्ष में करुणा मूत्ति भगवान बुद्ध की भव्य प्रतिमा

८ गुफायें साधारण कक्ष के रूप में हैं जो कभी साधको, कापाय वस्त्र धारी कल्याण पथ प्रदर्शक भिक्षुगण के आवास के हेतु उपयोग में आती रही होगी। १४ गुफाओ में तो मानो कला सजीव होकर मजुल भाव कथायें कह रही हैं। प्रथम दो गुफायें कक्ष के रूप में है। तृतीय में दस फुट ऊँचा १ फुट लम्बा और इतना ही चौडा सुन्दर स्तूप है। चौथे और पचम में क्रमश एक-एक स्तूप है। जो इससे किंचित लघु एव ऊँचाई पर है। दो छोटे छोटे स्तूप भी हैं।

छठवी एक विशाल कक्ष के आकार में है, जहाँ अन्तर्भाग में एक और छोटा कक्ष है। इनके प्रवेश द्वार पर पर दो भव्य स्तम्भ एव तोरण द्वार में शिला खडो पर छेनी हथौडे से कुशल कलाकारो द्वारा उत्कीर्ण कला के अद्‌भुत देन विस्मय विमुग्ध कर देते हैं।

सातवी गुफा में १५ फुट ऊँचा प्रवेश द्वार है। जिसमें २० फुट लम्बी मनोहर कलाकृति तोरण के रूप में अकित की गई है। इस द्वार की दोनो ओर दो सुन्दर अलिन्द हैं। इन्हें पार करने के पश्चात् लम्बा-सा दालान है। इस दालान में एक मनोरम कक्ष तथा चार कलापूर्ण स्तभ शिल्पाकन के अनुपम उदाहरण है। गुफा के मध्य एक सुन्दर विशाल कक्ष में ८ फुट ऊँची ५–५ फुट चौडा, लम्बा एक स्तूप है, और समीप ही ८वी गुफा का साधारण कक्ष है। ९वी का गोलाकार छत जिसमें प्रस्तर को काट कर सुन्दर वेलें पत्र-पुष्प अकित किये गये है। ऊँचा दालान, मनोरम अलिन्द, एव २० फुट लम्बा ८ फुट ऊँचा, ८ फुट चौडा स्तूप एव वायी ओर निर्मित कक्ष सुन्दरता के साथ नीरव खडा है।

१०वी एव एकादस गुफाओ में दो लघु अलिंद सावारण कक्ष तथा चार कलापूर्ण स्तम्भ वाला एक विशाल कक्ष दर्शनीय है। इस कक्ष के तीन द्वार वडे सुन्दर ढग पर निर्मित हैं। सम्भवत इसके वैभव के युग में इस कक्ष में विश्वदेव के पावन उपदेश-सुधा को जन-जन में वितरित किया जाता रहा हो।

द्वादशवी गुफा तो मानो कला को उत्कृष्टता के अचल में समेटी, अनुपमता को साकार कर रही है। यह सम्पूर्ण गुफा एक मनोरम उपासनागृह के रूप में है जिसके मध्य में आठ फीट लम्बा, ८ फीट चौडा, और १५ फीट ऊँचा भव्य स्तूप निर्मित है। इस स्तूप के दोनो पार्श्व में दो सुन्दर वीथियाँ हैं। जिसके किनारे १० कलापूर्ण स्तम्भ और ६ कक्ष हैं। तृतीय कक्ष में दो मानव मूर्तियाँ समाधि की मुद्रा में है, चार कलामय प्रस्तर स्तम्भो से निर्मित मध्य कक्ष में करुणा मूर्त्ति भगवान बुद्ध की भव्य प्रतिमा ध्यानमयी मुद्रा में सुशोभित है। इस विशाल गुफा में वायी ओर दो कक्ष, एक स्तूप एव तीन अलिंद विभिन्न पत्र-पुष्पो से अंकित हैं। तत्पश्चात् १५ फीट ऊँचे, ८ फीट लम्बे चौडे एक उत्कृष्ट जीर्ण-शीर्ण स्तूपमयी गुफा को पार कर चतुर्दशवें गह्वर मे प्रवेश करते है, जहाँ १५ फीट के ऊँचे स्तूप हैं। तथा एक ऊँचे आसन पर महाकारुणिक भगवान की भव्य प्रतिमा मानव को श्रद्धा विभोर कर देती है। और मस्तक अर्चना भावना से विश्वेश के चरणो में नत हो जाता है। इसके चारो ओर सुन्दर अलिन्द है। अलिन्द के वाम भाग में एक सात फीट ऊँची एव तीन लघु मानव मूर्तियाँ है। प्राची की ओर प्राचीर पर दो खडी, दो

वैठी प्रतिमाओ के मध्य भगवान की एक सुन्दर प्रतिमा अव-स्थित है।

दक्षिण की ओर पन्द्रह फीट लम्बी भगवान तथागत की विशाल प्रतिमा शयनस्थ मुद्रा में पावन गम्भीरता, सात्विकता का सचार कर रही है।

ये गुफायें पश्चिमी रेलवे के नागदा मथुरा लाइन पर श्यामगढ स्टेशन से तेरह मील दूर तीन मील के अचल में पहाडी पर निर्मित कला-कृतियो के रूप में अतीत की मनोरम निधियाँ है। जो दर्शनीय, विस्मयमयी, उत्कृष्ट शिल्पकला की अनुपम वस्तु है। छेनी हथौडे से निर्मित प्रस्तर पर यहाँ सूक्ष्म शिल्पकला के दर्शन होते है। वहाँ खेजडिया भोप के नीरव स्तूप भी जैसे उस स्वर्णिम मनोरम युग की गाथा को दुहराते शील-पालन के कल्याणकारी पथ पर चलने की प्रेरणा प्रदान करते है, जहाँ अलौकिक सुख है। शान्ति है।



# राजपुर

सुनील नभ में क्षितिज-छोर से उठती, कादम्बिनी कभी बरस जाती है। कभी हवा के झोको के साथ लहरा कर दूर देश में चली जाती है। तब मेघदूत की सजल कल्पना के साथ इस मालव-धरा पर कवि-कुल-गुरु कालिदास की स्मृति सजीव-सी हो उठती है। धूमिल पृष्ठो पर नक्षत्रो से चमक उठते हैं उदयन, वासवदत्ता, सम्राट चड प्रद्योत और महाकारुणिक भगवान तथागत की शरण में जा दिव्य शान्ति मयी कल्याणी वाणी का शुभ श्रवण करने वाले महापडित पुण्यशील महाकात्यायन की, जिन्होंने उन उपदेशो मे मालव के कण-कण को तृप्त कर दिया। इसी प्रदेश से सम्राट देवानाप्रिय अशोक की हृदयेश्वरी महारानी विदिशा कुमारी देवी ने अपने अचलधनो को धर्म की शरण में अर्पित कर दिया और विशाल स्तूप तथा भव्य विहारो का निर्माण करवाया। समीर लहरियो में पावन सुतो एव वन्दना की ध्वनि गूज उठी। प्राणि मात्र धर्म की शरण में सुख-शान्ति मय स्वर्णिम युग में विचरण करने लगा।

इसी मालव के शिवपुरी जिले में जहां का सदर मुकाम शिवपुरी कुछ वर्ष पूर्व रियासती काल में ग्वालियर राजपरिवार की ग्रीष्मकालीन मनोरम निवासस्थली थी उसी जिले में रमणीय प्राकृतिक सौन्दर्य के मध्य राजपुर नाम का स्थान आज भी गौरव-पूर्ण अतीत की सुस्मृतियो मे पूर्ण मौन पड़ा है।

ग्यारसपुर में प्रतीची की ओर एव उत्तर की पहाडियो पर उस काल की शिल्प-कला एव धार्मिक भावना आज भी झलक रही है। सावन के उमडते मेघ आज भी भगवान वुद्ध की शान्त मुद्रामयी युगल प्रतिमाओ के चरणो पर अर्घ रूप जल बरसा जाते हैं। पुरवाई की सुरभित समीर लहरी सद्य कुसुमति प्रसून पखडियो के परिमल पराग कणो के साथ वन्दना कर धन्य हो जाती है। मानो अलक्ष्य के पावन सन्देश को प्रसारित करती है कि शील पालन से ही जीवन कल्याण हो सकता है। भगवान की ये युगल मूर्तियाँ ग्राम से पश्चिम की ओर दो मील पर विशाल शिलाओ को काट कर बनाई गई हैं। ग्राम के ऊपरी सीमा पर स्तूपो के भग्नावशेप हैं, और साथ ही एक भव्य प्रस्तर प्रतिमा है महाकारुणिक की ही। शिला खण्डो पर निर्मित कलापूर्ण अकन नष्टप्राय होकर भी कला-प्रियता के प्रतीक वने हैं।

इन स्तूपो के ध्वशावशेप से करीव दो सौ गज की दूरी पर पहाडी की पूर्वी ढाल पर एक सुन्दर जलाशय है, जो किसी समय शील पालन करते, त्यागपूर्ण जीवन व्यतीत कर ज्ञान-विज्ञान, कला, ममता के पथ पर जाने वालो की निवास स्थली होने के कारण जनरव से पूर्ण रहा होगा। आज केवल वनचरो और यात्रियो के उपयोग में आ शोभा व शीतलता का स्थान वना नीरव पडा है। यह सुन्दर जलाशय मानसरोवर के नाम से विदित है। इसके पुलिन पर भी शिल्प सौन्दर्यपूर्ण शिलायें यत्र-तत्र पडी हैं, जो पूर्व स्मृतियो को नवीनता प्रदान कर रही हैं।

वौद्ध-काल की इस एक चिर सुप्त निशानी के, अतीत के

वैभव की नीरव पावन स्मृति स्थली के, समीप मजुल कलापूर्ण स्तम्भो से निर्मित हिंडोला, तोरण, व मठ, मन्दिर आदि और भी अन्य पुरातत्व की सामग्री व दर्शनीय स्थल हैं।

नीरवता के अखड साम्राज्य में, कोकिला के गीत मधुर स्वर छेड देते है। राग-रजिता उपा सुन्दरी अरुण अवगुन्ठन की ओट से विहँस उठती है और रश्मि वलयित रवि, रश्मियो के वन्दनवार से धरा को शोभायमान कर देते है। शत शत सुमन बिखेरती कोमल डालियो पर कलिकायें मृदु पल्लवो के साथ झूम उठती हैं और विश्व की साकार सुपमा मानो महाकारुणिक विश्व देवता के चरणो पर नत हो जाती है तथा भावुक मन मगलमयी मृदुल भावना में विभोर हो कह उठता है—

"भवतु सव्व मगल"



# विदिशा के परिवेश में

विमला वेत्रवती (वेतवा) और वेस नदियो के सगम प॰ तटवर्ती विदिशा नगरी में अवन्तिका जाते हुये सम्राट देवानाप्रि॰ अशोक कुछ काल ठहरे थे। वही उनकी प्रणयिनी श्रेष्ठिसुत महारानी देवी की निवास स्थली थी, जो महामहेन्द्र एव शुभश्र॰ सघमित्रा की जननी थी। अपने अचलंबन महाश्रावक महामहेन्॰ को सिंहल-प्रस्थान के समय त्यागमयी विदिशा कुमारी देवी ने यहीं ठहराया था, तभी अनेकानेक स्तूप विहार मालव के इस अचल मे निर्मित हुये। इस स्थान से छ सात मील दूर पर सांची के पावन स्तूप भी विहार विदिशा-कजकली की धार्मिक भावना को साकार कर रहे हैं। यह विदिशा, वेत्रवती के पुलिन पर आधुनिक भेलसा से कुछ दूरी पर स्थित है। यहां कई सुन्दर गुफायें शस्य श्यामला धरणी पर पहाडी के रूप में शोभित है, ये गुफायें बहुत समय से बौद्धेत्तर लोगो के द्वारा अधिकृत की जा चुकी हैं। पुण्यमयी देवी के समय में यह पूज्य भिक्षुओ की आवास स्थली के हेतु निर्मित की गई प्रतीत होती है।

लगभग बारह मील के कानन अचल में विदिशा सांची के समीप बहुत से स्तूप समूह जीर्ण-शीर्ण
आकर्षण केन्द्र बने हुये हैं। जिनमें चार

१ सांची से सात मील दूरी पर
स्तूप हैं।



२ सतधारा—यहाँ से भी पावन धातुयें साँची की धातुओं के साथ ले जाई गई थी। यह प्रतीची की ओर साढे छ मील पर विद्यमान है।

३ सोनेरी—प्रकृति के मनोरम अंक में शोभित रम्य स्थली पर स्तूपो के ध्वसावशेष साँची से छ मील दक्षिण पश्चिम में अवस्थित हैं।

४ विदिशा से आठ मील दक्षिण पूर्व पर अन्धेर गुफा स्थित स्तूप-समूह है।

बेतवा के पुलिन प्रदेश पर प्राकृतिक शोभाश्री में अतीत के स्वर्णिम युग की सुस्मृतियां इन स्थलियो में मानव मन को आज भी मुग्ध करती है ? जिन पर अब भी सरला प्रकृति हरित पुष्पमय परिधान पहने अपना रूप सँवारे सुरभित मृदुल-मृदुल पुष्पांजलि अर्पित कर देती है। शरद चन्द्र की अमियमयी ज्योत्स्ना में रुनझुन मंजीर के स्वर विदिशा कुमारी की स्मृति को सजीव कर देते है, जो अपने अचल-धनो को त्रिरत्न की शरण में अर्पित कर सुदूर देशो में करुणा-मैत्री के स्वर गुंजित कर दी, तथा अपने विदिशा के समीप कितने स्तूप विहारो का निर्माण करके विश्व कल्याण के पथ पर चलने की प्रेरणा प्रदान की। जिन खडहरो पर कोकिला की तान भावुक मन में एक कसक एव अर्चना की पवित्रता प्रदान करती है, तथा भावुकता गुनगुना उठती है किसी कवि की पक्तियो को ..

कूक कोकिले! खंडहरो की, गग्न धूलिकर मान,
कह दे ग्राम ग्राम की करुणा, गाथा के आख्यान।

# सांची

लगभग ३०० फीट की ऊँचाई पर स्थित सांची की पहाडी रग-बिरगी शिलाओ पर वासन्ती पुष्पो की शोभा से सौरभ एव सुषमा बिखेरती सम्राट् देवानाप्रिय अशोक के समय से अग्रश्रावक सारिपुत्र तथा महामौग्दलायन के पावन पुनीत धातु-पुष्पो को लिये आज भी मौन खडी है। उस स्वर्णिम युग से वर्तमान जनतत्री काल तक इसने कितने ही उत्थान पतन देखे। फिर भी पलास, कर्णिकार के वृक्ष अरुणपीत पुष्पो की अजलि बिखेर कर आम्र वृक्ष अपनी माधवी गन्धमयी मजरियाँ अर्पित कर युग युग से अर्चना करते आ रहे हैं, क्यो न हो करुणा-मैत्री के प्रतीक महा कारुणिक भगवान तथागत के पश्चात् इन पूज्य जनो की पवित्र अस्थियो को साँची सदा से सँजो कर रखे हुई है।

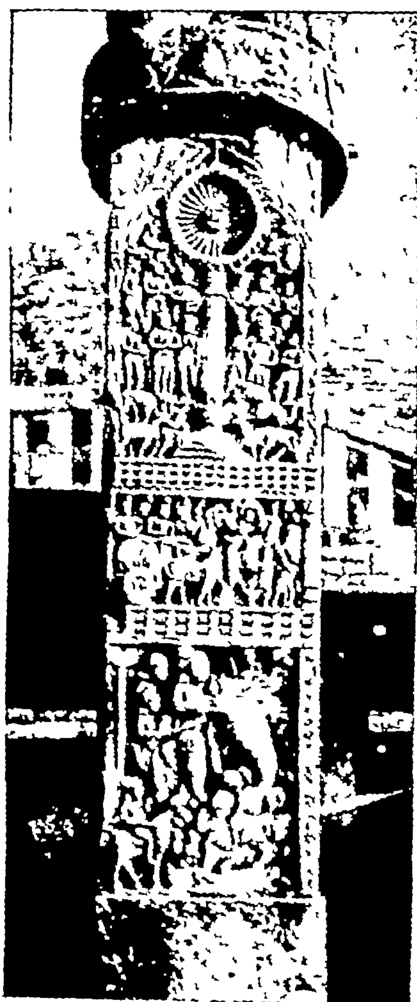
जनरल कनिंघम के समय में पवित्र धातुओ को साँची और सतधारा से लन्दन ले जाया गया। मौन साँची के तोरण द्वार मूक होकर निहारते रहे। बेतवा की धारा सिहर उठी किन्तु धैर्य और शान्ति मयी प्रतीक्षा एव प्रयत्नो के पश्चात् (जिसका विवरण बहुत बडा है) सस्कृति के इतिहास में २० फरवरी ४७ ई० को महान घटना घटी और पवित्र धातुयें साँची की क्या भारत की अमूल्य निधि, भारत को पुन प्राप्त हुई फिर सिंहल, सारनाथ, वर्मा, नैपाल में अर्चना के पुष्प अर्पित किये गये। तीस नवम्बर सन् ५२ की सुनहली सध्या को महान समारोह के

चित्रित किया गया है। उत्तर की ओर निर्मित तोरण द्वार पर भगवान् के जीवन सम्बन्धी पुनीत घटनाओ का अकन टेढी-मेढी वकिम खोदाई द्वारा कमनीय एव भावपूर्ण है, छ दन्तो से युक्त बलशाली छद्दन्त जात की सम्पूर्ण घटना तथा अन्य जातको की कहानियाँ बहुत सुन्दर विधि से अकित की गई है। द्वार की बायी ओर एक नारी-मूर्ति भी मनहर है।

दक्षिणी द्वार पर वनराज जातक की कथा अनुपम शोभा बिखेरती उस कथा को साकार कर रही है, जब भगवान् ने महा-कपि के रूप में जन्म धारण किया था। तब वाराणसी के ब्रह्मदत्त नरेश ने गगा-पुलिन पर स्थित उनके आवास, आम्र वृक्ष को घेर लिया था, महाकपि ने अपने शरीर का पुल बना कर अपने आश्रितो की रक्षा की थी। प्राची एव प्रतीची के द्वार पर वृषभ, हरिण, कज कुसुम कलिकाओ की पृष्ठ-भूमि पर अकित रम्य जातक कथायें तत्कालीन प्रस्तरकला की अनुपम देन हैं। विभिन्न भावमयी प्रतिमाओं में तत्कालीन वेशभूषा, आभूषण आदि उत्तमता से चित्रित हैं। इस स्तूप के शीर्ष भाग पर सुन्दर छत्र बने हुये है, जो मनोरम घेरे से घिरे हैं। चारो प्रवेश द्वारो के भीतर समीप ही भगवान की चार भव्य प्रतिमायें गम्भीर मुद्रा में उच्चासन पर आसीन है। इससे कुछ छोटा किन्तु महत्वपूर्ण स्तूप उत्तर-पूर्व की ओर स्थित है।

इनके अतिरिक्त ४०–४५ स्तूप है जो कुछ तो ठीक स्थिति में और कुछ ध्वस प्राय से है। ये बडे बडे और एक-एक फुट छोटे भी है। किन्तु सभी गुम्बद के आकार में ही है। ये

## बौद्ध कला-कृतियाँ—



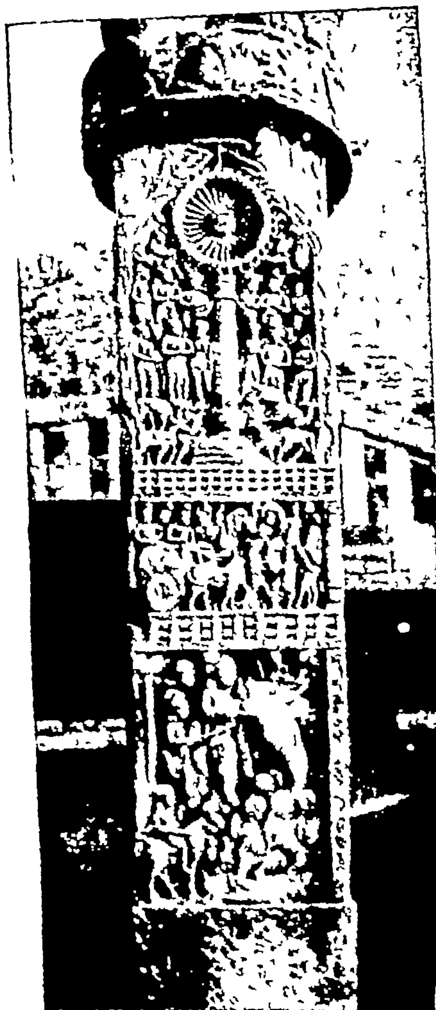
जातक कथाओं से अलंकृत साँची
का एक स्तम्भ

चित्रित किया गया है। उत्तर की ओर निर्मित तोरण द्वार पर भगवान् के जीवन सम्बन्धी पुनीत घटनाओ का अकन टेढी-मेढी वकिम खोदाई द्वारा कमनीय एव भावपूर्ण है, छ दन्तो से युक्त वलशाली छद्दन्त जात की सम्पूर्ण घटना तथा अन्य जातको की कहानियाँ वहुत सुन्दर विधि से अकित की गई है। द्वार की वायी ओर एक नारी-मूर्ति भी मनहर है।

दक्षिणी द्वार पर वनराज जातक की कथा अनुपम शोभा बिखेरती उस कथा को साकार कर रही है, जव भगवान् ने महा-कपि के रूप में जन्म धारण किया था। तव वाराणसी के ब्रह्मदत्त नरेश ने गगा-पुलिन पर स्थित उनके आवास, आम्र वृक्ष को घेर लिया था, महाकपि ने अपने शरीर का पुल वना कर अपने आश्रितो की रक्षा की थी। प्राची एव प्रतीची के द्वार पर वृषभ, हरिण, कज कुसुम कलिकाओ की पृष्ठ-भूमि पर अकित रम्य जातक कथाये तत्कालीन प्रस्तरकला की अनुपम देन हैं। विभिन्न भावमयी प्रतिमाओ में तत्कालीन वेशभूषा, आभूषण आदि उत्तमता से चित्रित हैं। इस स्तूप के शीर्ष भाग पर सुन्दर छत्र वने हुये हैं, जो मनोरम घेरे से घिरे हैं। चारो प्रवेश द्वारो के भीतर समीप ही भगवान की चार भव्य प्रतिमायें गम्भीर मुद्रा में उच्चासन पर आसीन है। इससे कुछ छोटा किन्तु महत्वपूर्ण स्तूप उत्तर-पूर्व की ओर स्थित है।

इनके अतिरिक्त ४०–४५ स्तूप हैं जो कुछ तो ठीक स्थिति में और कुछ ध्वस प्राय से हैं। ये वडे वडे और एक-एक फुट छोटे भी है। किन्तु सभी गुम्बद के आकार में ही हैं। ये

बौद्ध कला-कृतियाँ—



जातक कथाओं से अलंकृत सांची
का एक स्तम्भ

कालीन धार्मिक, त्यागशीलो की स्मृति स्वरुप कितनी ही कहानियो
ो लिये हुये हैं।

स्तम्भो से निर्मित चैत्य, कक्ष के कलात्मक स्तम्भ इसके प्रमाण
कि यह पहले अपनी उत्तम स्थिति में रहा होगा। जहां महा-
रानी देवी के जीवन काल में उल्लास की मधुरिमा निखरती रही होगी।

धर्मशील भिक्षुगण के आवास जीर्ण-शीर्ण दशा से विद्यमान है।
वर्तमान में नया विहार भी आधुनिक भवन निर्माण कला की उत्तम
वस्तु है। एक विशाल प्रस्तर स्तम्भ के कलापूर्ण खड पड़े है।
जिसे सम्राट ने धर्म प्रचारार्थ निर्माण करवाया था। ये सुन्दर
स्थापत्य कला के प्रतीक है। स्तम्भो का शीर्ष भाग जिनमें एव
चक्र अंकित है सग्रहालय मे प्रवेश करते ही ध्यान आकर्षित करते
है। जिनमें से एक १०×६ फीट ऊँचा व चौडा है दूसरी मनो-
हारिणी वस्तु है किंचित झुकी हुई पद्मपाणि बोधिसत्व की लगभग
सात फीट ऊँची अलकृत प्रतिमा, भावुक मन को श्रद्धा से विभोर
कर देती है।

इनके अतिरिक्त चूड़ियां, पात्र, लोहे के अस्त्र-शस्त्र, मृत्तिका-
पात्र, अन्य आभूषण राजकीय मुद्रायें, आदि तत्कालीन वेशविन्यास,
रहन-सहन, जीवन, सामाजिक धार्मिक स्थिति को दर्शाती बौद्ध
कालीन स्वर्णिम युग का यशोगान कर रही है। जिस युग में प्राणि
मात्र के हृदय को करुणा एव मैत्री से विजय किया गया था।
आज भी जनतन्त्रीय भारत उन्ही सम्राट् द्वारा निर्मित पावन ऋषि-
पत्तन (सारनाथ) के धर्मचक्र युक्त तिरंगे ध्वज की छाया में
पन शान्ति का इन दन शान्ति प्रसार में लीन है।

सांची बौद्ध सस्कृति की रानी-सी तत्कालीन श्रद्धा भावना एव सभ्यता की प्रतीक है,। जहाँ मौर्य काल की अनुपम व उत्कृष्ट शिल्प कला के दर्शन होते हैं।

सुन्दर शिल्प साकार कल्पना के, प्रतीक से वन्दनवार,
जिसके स्तम्भो पर अकित, जातक रम्य रूप अवतार।
ससृति में गुजित कर दो फिर, स्वर्णिम युग के गौरव गान,
विदिशा-राज-नन्दिनी के ओ, श्रद्धामय पावन उपहार ।।



# अंगुलिमाल की निवास स्थली

जिस मनोरम भूमि की हृदयहारिणी प्राकृतिक सुषमा प्राणिमात्र के मन को मोह लेती है, नित्य प्रातःकाल की माधवी वेला में जहाँ रागरंजिता उषा हेम कुम्भ या आलोकित मंगल कलश लिये विहँसती आती है और विश्व रवि रश्मियों की आभा में उल्लासित हो उठता है। नील जलाशय पर अरुण शुभ्र, नील कंजकलिकायें मुस्कुरा उठती हैं और भावुक भ्रमर गुनगुना उठते हैं। इसी मनोरम पावन धरा पर महाकारुणिक ने जन्म धारण किया और शान्ति एवं करुणापूर्ण मंगलमय उपदेशों से विश्व कल्याण किया। यहाँ बीहड़ कान्तारों में कितनी विचित्र स्थलियाँ कितनी ही स्मृतियों को लिये आज उपेक्षिता सी पड़ी हैं, उनमें से एक है विन्ध्या के अंचल प्राचीन नाम दशार्ण, आधुनिक विन्ध्य प्रदेश में स्थित सिया कुंड।

यह स्थान किसी समय बीहड़ भयावह स्थल रहा होगा। आज भी ऐसा प्रतीत होता है क्योंकि जंगल में आठ-दस ग्रामवासियों की झोपड़ियों के अतिरिक्त यहाँ कोई जन-निवास नहीं है। यात्रीगण सदा आया करते हैं। सागौन, चिरौंजी निकलने वाले चार, तेंदू, आम, नीम, महुआ आदि के वृक्ष इस पर्वतीय स्थान पर बहुतायत से हैं। यह स्थान सिया कुंड, रेलवे स्टेशन से काफी दूर है, किन्तु मोटर मार्ग से काफी समीप है। इलाहाबाद से

समीप मानिकपुर जकशन से झाँसी जाने वाली लाइन पर हरपालपुर नामक स्टेशन है। वहाँ से वस द्वारा छतरपुर जाया जाता है, (जो छतरपुर जिले का सदरमुकाम है) छतरपुर से विजावर मोटर जाती है। विजावर छतरपुर जिले की तहसील का सदरमुकाम है। बिजावर से बीस मील दूर दक्षिण की ओर कच्ची सडक पर यह विचित्र स्थान भिया-कुड है। किम्वदन्ती है कि प्राचीन समय में यहाँ एक डाकू रहता था, जो वडा डरावना था। वह लोगो के धन और प्राण हरण कर लेता था, वह जिसके प्राण लेता था, उसकी एक उँगली का एक पोर अपनी माला में पिरो लेता था। एक समय एक देवता पुरुप से उसकी भेंट हो गई और वह वलवान डाकू डाकूपन छोड कर साधु वन कर कही चला गया।

उक्त किम्बदन्ती से विदित होता है कि उस. भयानक डाकू की कथा विख्यात डाकू अगुलिमाल की हो सकती है, जिसने भगवान् तथागत की शरण में जा रौद्र कर्म त्याग शान्तिलाभ किया था।

ऐतिहासिक दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण है ही, साथ ही प्राकृतिक एव भूगर्भ वेत्ताओ के उपयोग की दृष्टि से भी। पहाडी के भीतर एक गुफा है, जिसकी लम्बाई १३५ फुट और चौडाई ६५ फुट है, इस गुफा के भीतर लगभग २५ फुट लम्बा १० फुट चौडा एक कुड है। इस कुड तक पहुँचने के लिये दो द्वार हैं। एक अपार वोझ वाले पापाण के प्राकृतिक छत पर जो विना किसी स्तम्भ या सहारे के न जाने कितने काल से अवस्थित है। उसके

बीचोबीच एक बहुत बडा छेद है। यह किसी ज्वालामुखी का मुख कहा जाता है, जहाँ से कई सौ फीट नीचे गहराई पर कुड का सुनील जल दृष्टिगोचर होता है। जानवरो के गिर कर मर जाने के कारण अब इस छेद के किनारे लोहे के कटीले तार का घेरा बनवा दिया गया है, और दूसरा है पहाडो मे गुफा के भीतर पहुँचने का द्वार, जिससे प्राणी कुड तक सुविधापूर्वक आते जाते है। जहाँ से गुफा मे प्रवेश करते है, वहाँ पाषाणो को काट कर दो मजिला दालान बनाया गया है। बिजावर पहले बुन्देलखंड एजन्सी में एक रियासत थी, वहाँ के क्षत्रिय महाराज स्वर्गीय सावन्तसिंह जी प्रवेश द्वार से कुड के जल तक जाने के लिये पाषाणो को काट कर बनाई गई प्राचीन सीढियो को सुधरवा दिये है। कुड के एक ओर दालान में ये सीढियाँ है दूसरी ओर केवल दालान ही है तीसरी ओर एक पत्थर काट कर दीवार और उस पर चढने के लिये सीढियाँ बनवा दी गई है। चौथी ओर जल का खिचाव है। तैराक लोग सीढियो से दीवार पर चढ कर जल में कूद कर तैरते है पर खिचाव की ओर कोई नही जाता। उधर बहुत अंधेरा और भयानकपन है। एक बार एक व्यक्ति उस ओर तैरता हुआ चला गया था, जो उधर ही खिच गया और उसका कोई पता न चला। इस गुफा में पर्याप्त प्रकाश रहता है और कुड का जल सुनील एवं स्वच्छ है। यदि पैसा डाला जाता है, तो वह काफी गहराई तक डूबता नजर आता है। इसकी अनन्त गहराई का पता उक्त महाराज साहब लगाने का प्रयत्न किये पर पूर्ण सफलता न मिली। यहाँ का जल स्रोत का जल

है। वर्षा का पानी यहाँ नही पहुँच पाता। इसका यह स्वच्छ जल रासायनिक प्रभाव युक्त है। गगा जल की भाँति इसका जल भी शीशियो में बन्द रखने पर भी खराब नही होता। चूना एव खनिज द्रव्यो के प्रभाव से यह जल पेट की बीमारियो के लिये उपयोगी सिद्ध हुआ है, और भी लाभ होगे जो अभी अज्ञात हैं।

विन्ध्य-प्रदेश एवम् पडोसी प्रदेशो के दर्शक प्राय वहाँ जाया करते हैं, और प्रकृति के इस विचित्र, अनुपम तथा मनोरम पर्वतीय स्थल की विचित्रता और बीहडता पर चकित हो जाते हैं, बिजावर के किन्ही नरेश ने लगभग आध मील दूरी पर एक सुन्दर विश्रामगृह बनवा दिया है जहाँ वे प्राय ठहरा करते थे। अब भ्रमणप्रिय यात्रियो को वहाँ ठहरने के लिये जिलाधीश महोदय छतरपुर से सुविधा प्राप्त कर लेना चाहिये। बिजावर से [illegible] कुड जीपकार भी जा सकती है।

यदि विन्ध्यसरकार इस ऐतिहासिक [illegible]
आगार तक जानेवाली सडक को ठीक करा दे
उपयोगी स्थान आज की सस्कृति को सुलभता
और यह बौद्धकालीन विख्यात अज्ञात स्थान
शीलो तथा भूतत्व-वेत्ताओ का आकर्षण

# खजुराहो

स्वतंत्र भारत के ऐतिहासिक पोस्टेज स्टाम्प में देखा गया है—खजुराहो का मनोरम प्रभावशाली शिल्प-कलामय मन्दिरों का चित्रांकन, जो चित्र में इतने सुन्दर हैं वे प्रत्यक्ष में सत्य, सुन्दर और कल्याणकारक उपदेशों की पावन स्मृतियाँ भी हैं। किन्तु रेलवे लाइन से दूर होने के कारण यह कला-तीर्थ वनस्थली के बीच युग-युग से उत्थान पतन को देखते नीरवता में खड़ा उन युगों का यशोगान कर रहा है, जहाँ कभी विभिन्न संस्कृतियों के ८४ मंदिर थे आज कठिनाई से २५–३० ही होंगे। एक समय था जब सुदूर चीन का यात्री ह्युएनसांग भारत आया था, तब वह देखा था पावन बौद्ध विहारों को, विद्या के केन्द्र खज्जुर्वाह् को। यद्यपि वहाँ के तत्कालीन नरेश ब्राह्मण थे किन्तु मंगलमय निरन्न के प्रति श्रद्धामयी भावनायें रखते थे। उस समय त्यागमय जीवन व्यतीत करने वाले ब्रह्मचारी स्थविरगण नाना प्रकार की शिक्षा देते जीवन के उज्ज्वल पथ का प्रदर्शन कर रहे थे, सुनार्थी ने खज्जुर्वाह एवं समीपस्थ स्थलों पूर्णों की काफी चर्चा होती, जलाशय भी कंज-कलिकाओं को अंचल में समेटे लहराते थे। उस प्रदेश धन-धान्य से भरा पूरा था। अगर कुन्द की श्याम लहरियों घनी चन्द्रमा के पावन स्थलों के बीच सुख शान्ति विराज रही थी।

यही स्थान आज खजुराहो के नाम से विख्यात है। यह स्थान २४°५१' अक्षांश और ८०° देशान्तर पर स्थित है। यहाँ से छात

मील पर पूर्व की ओर चचल तरगो वाली केन नदी वहती है।
विन्ध्य-प्रदेश के छतरपुर जिले में छतरपुर नगर से २७ मील पूर्व की ओर यह ग्राम स्थित है। मध्य रेलवे (पूर्व नाम जी० आइ० पी०) के इलाहाबाद समीपस्थ मानिकपुर झाँसी लाइन के हरपालपुर स्टेशन से छतरपुर तक बस द्वारा जाते हैं। छतरपुर से राजनगर ग्राम तक फिर वस सर्विस है। राजनगर के समीप ही खजुराहो के दर्शनीय स्थान श्री सम्पन्न वैभवशाली विख्यात नगर खज्जुर्वाह की स्मृति लिये खड है। विशाल भव्य मदिरो की निर्माण कला मानव को मुग्ध एव चकित कर देती है। शिल्प-कला के उत्कृष्ट प्रतीक भावभगिमापूर्ण मुद्रामयी मूर्तियो को सँजोय भारतीय शिल्प सौन्दर्य की निधि को गर्व से समेटे है। समस्त भारत में इतने प्राचीन मदिरो के समूह शायद ही कही हो। इनके प्राचीरो पर्व निर्मित भाव-भगिमायें पूर्ण प्रतिमाओ में दो ढाई सहस्त्र वर्ष पूर्व के जीवन की, सस्कृति की झलक स्पष्ट दिखाई दे रही है, दर्शक इन्हें देख कर स्मृतियो में खो जाता है। पाषाणो पर अकित शिल्पकला सुन्दर व अनुपम है, अत्याचारी महमूद गजनवी भी इस पुण्य स्थली की कला-सौम्यता के सन्मुख नत हो गया था, और यहाँ के वहुत से विशाल मदिर नष्ट होने से वच गये थे।

इसके वैभव के कारण "खजूर्वाहि" इन पूर्व नाम के लोग कई अर्थ लगाते है, कि यहाँ युगल खजूर वृक्ष स्वर्ण के निर्मित कराये गये थे, किन्तु उनका कोई चिह्न भी अवशिष्ट नही है हाँ, खर्जूर वन मे स्थित होना इस नाम की सार्थकता को सिद्ध करता है। इस प्राचीन नैसर्गिक सुषमामयी भूमि के समीप कई मनोरम गुफायें,

कलकल निनादित झरने, हरित कुसुमित वृक्षावलियाँ, तृण वीरुध एक नवीन उल्लास का संचार करते पवित्रता एवं शान्ति का सन्देश दे रहे हैं। खर्जूरसागर, शिवसागर, जटकरी, कुरार नाना नाम के छोटे-छोटे ग्रामों में ये मन्दिर और संघाराम तथा विहारों के ध्वंसावशेष दूर-दूर तक फैले हुए हैं। ये लगभग ६–७ मील के क्षेत्र में हैं। यदि विन्ध्य सरकार इन टीलों के उत्खनन की ओर ध्यान दे तो पुरातत्व प्रेमियों को बौद्ध कालीन कला की अनुपम वस्तुयें प्राप्त हो सकेंगी।

बौद्धकालीन सुन्दर पावन संघाराम और विहारों के अवशेष तथा एक विशाल विहार का खंड एवं मन्दिर के खंडहर का टीला वैभवशाली विद्या केन्द्र की मंजुल स्मृतियाँ हैं। जहाँ एक समय देश देशान्तर के शिक्षा प्रेमी आकर शान्ति, करुणा ज्ञान की प्राप्ति कर त्यागपूर्ण, शीलमय जीवन व्यतीत करते थे। त्रिरत्न की शरण में जा मंगलमय सन्देशों को प्रसारित कर विश्व कल्याण के पथिक बनते थे। उस पावन स्थल में बौद्धकाल के अतिरिक्त जैन, वैदिक कलाकलापूर्ण मन्दिर, सुन्दर सरोवर एवं मूर्ति संग्रहालय भी दर्शकों के आकर्षण का केन्द्र है। यहाँ मनोरम मूर्तिकला को देख अतीत के वैभव गौरव में मुग्ध मन कवि की इन पंक्तियों को साकार सा गुनगुना उठता है। ·

खजुराहो में सोहती मूर्तिकला साकार है।

# भद्रावती

कोयल के मधुर गीत, विहगो के कलरव नित्य ही जहाँ मधुरिमा बिखेर देते है। वह खडहरो के पूर्व स्मृति चिह्नो की रानी भद्रावती आज भी पुरातत्व का आकर्षण केन्द्र है। प्राचीन काल में यह प्रसिद्ध वाकाटक वश के श्रद्धालु बौद्ध नरेशो की राजधानी थी। गगनचुम्वी प्रासाद, मनोरम उपवन, सुन्दर पथ-वीथियो में वैभव झाँकता था। विख्यात चीनी यात्री ह्वुएनसाग अपनी भारत यात्रा में इस नगरी मे भी आया था। उसने देखा था किले की सुदृढ दीवारो को, कला-पूर्ण प्रवेश द्वार को और सुख शान्तिपूर्ण जीवन को। वहाँ एक हजार से अधिक स्तूपों का होना भी उक्त यात्री के वर्णन से विदित होता है। जहाँ एक हजार से अधिक स्तूप थे, वहाँ बौद्धकालीन स्वर्णिम अतीत की सुखश्री कैसी रही होगी? आज उसकी कल्पना मात्र की जा सकती है। आज वहाँ की प्राचीरें भग्न हो चुकी है। तोरण वीते युग की याद लिये दिन गिनते खडे हैं।

भद्रावती नगरी जिसे अव माँदक ग्राम कहते हैं, वहाँ से एक मील दूर पर अति प्राचीन एक गुफा है जो "वज्रासन" के नाम से विदित है। इस गुफा के तीन भाग हैं—एक विशाल गुफा मध्य में है और दो गुफायें उसके पार्श्व में हैं। महाकारुणिक भगवान बुद्ध की तीन विशाल एव भव्य प्रतिमायें तीनो गुफाओ में अवस्थित हैं। ध्यानमयी मजुल मुद्राओ के दर्शन से मानव श्रद्धा से नत हो

जाता है। इन कन्दराओं के आस-पास स्तूपों के ध्वंसावशेष विद्यमान हैं। कई टीलों के रूप में परिवर्तित हो चुके हैं। उत्खनन के पश्चात इनमें तत्कालीन कला-सौन्दर्य की अनुपम निधियां अवश्य प्राप्त हो सकती हैं, जो पुरातत्व प्रेमियों के लिये तथा तत्कालीन सांस्कृतिक ज्ञानार्जन के हेतु अभिनव देन होगी। ये स्मृति चिह्न, वज्रासन की कलापूर्ण गुफायें व प्राचीन भव्य प्रतिमायें उस युग की याद दिलाती हैं, जब यह नगरी मंगलमय उपदेशों की सुशीतल छाया में सुख, सौभाग्य, श्री से पूर्ण रही होगी। साथ ही विद्या एवं कला का केन्द्र भी।

भद्रावती "वर्तमान भांदक" मध्यप्रदेश में स्थित है। वहां तक जाने के लिये पहले मध्यप्रदेश की राजधानी नागपुर जाना पड़ता है। नागपुर से जी० एन० आर० लाइन के चांदा स्टेशन जाते हैं। चांदा से चालीस मील दक्षिण की ओर भद्रावती का मन्दिर गुफायें एवं ध्वंसावशेष है। चांदा से भांदक रोड नामक छोटे स्टेशन तक ट्रेन जाती है। भांदक रोड से दो तीन मील पर भद्रावती है।

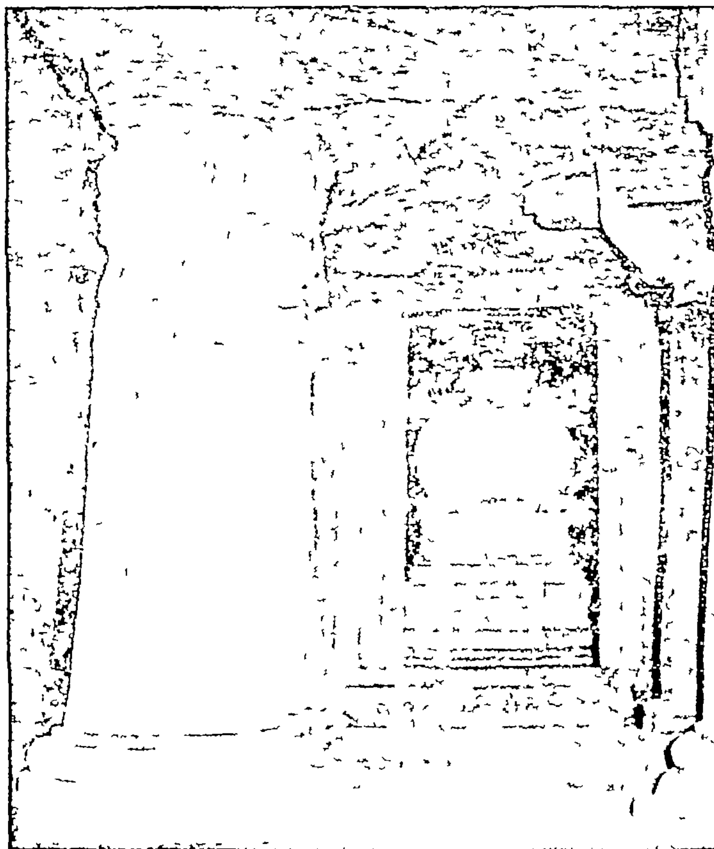
वज्रासन की भव्य गुफायें, स्तूपों के ध्वंसावशेषों के अतिरिक्त देवताओं द्वारा निर्मित नाग पाषाणों का पुल, सुन्दर जलाशय, भग्न मन्दिर, मूर्तियां एवं प्राचीरों की भव्य नींवें तत्कालीन वैभव की याद दिलाती हैं। तथा यात्रियों के आकर्षण की वस्तुयें हैं।

यहां टेकरी में जैन मन्दिर के भी खंडहर थे जहां हाल ही में जैनियों ने विशाल मन्दिर निर्माण कर पूजादि का प्रबन्ध कर दिया है साथ ! पौराणिक महत्व सुरक्षित निधि "वज्रासन" की सुन्दर गुफाओं में भी [illegible] का प्रबन्ध हो जाता और [illegible] देखना चाहिये

कल्याणकारी उपदेशामृत के प्रसार से समीपस्थ जनता लाभ उठाती
यह स्थली पुन विद्या एव कला केन्द्र हो जाती तो जन-कल्या
के साथ कला एव सस्कृति की उत्तम निधि सुरक्षित रह जाती।



## बौद्ध कला-कृतियाँ--



वाघ गुफा का भीतरी दृश्य

# मालवा के बौद्ध अवशेष

बौद्ध साहित्य के इतिहास में मालवा प्रदेश का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान है। यह निर्मला नर्मदा, चंचल चंबल, विमला वेत्रवती का पुलिन प्रदेश कितनी ही गौरव गाथा एवं सांस्कृतिक अवशेषों को अंचल में समेटे स्वर्णिम युग का यशोगान कर रहा है। करुणा मूर्ति भगवान तथागत के जीवन काल में जब समस्त उत्तरापथ उपदेशों की शीतल छाया में शान्ति लाभ कर रहा था, तब इस प्रदेश की पावन, पुनीत प्रमुख नगरी उज्जयिनी के नरेश चंड प्रद्योत ने अपने पुरोहित कात्यायन को भगवान तथागत के समीप भेजा कि वे उन्हें आदरपूर्वक अवन्तिका लिवा लावें। किन्तु महापण्डित कात्यायन ने भगवान की वाणी का अर्थ समझ लिया और महाकारुणिक की शरण में नत हो गये।

इस उपदेश सुधा को उन्होंने उज्जयिनी एवं मथुरा में वितरित कर जन-कल्याण किया। मधु पिण्डक, कात्यायन एवं पारायण नाम से अवन्तिका के समीप 'मकरकट' के कानन में निवास कर भगवन्मय उपदेशों को प्रसारित करते रहे। जाति व्यवस्था के एकाधिकार के सम्बन्ध में मथुरा नरेश से इनका वार्तालाप हुआ जो माधुरीय सुत्त के नाम से आज भी पालि-साहित्य में विद्यमान है।

विदिशा और अवन्तिका तो [illegible] के [illegible] और सम्राट देवानांप्रिय की धर्मपत्नी महारानी देवी की धर्म-भावना [illegible] के लिये [illegible] भी [illegible]। इनके [illegible]

अचल में, नर्मदा तट के माहेश्वर में, धमनार, तुम्ववन की गुफाओ में तथा साँची के गौरवशाली स्तूप के समीपस्थ साँची से दक्षिण की ओर ६ मील पर सोनेरी, सोनेरी से ६ मील पर सतधारा, से स्तूप व विहारो के भग्नावशेष मालव प्रदेश की धर्म भावना के प्रतीक बन कर करुणाकलित भावनाओ की ओर प्रेरणा दे रहे हैं। महारानी देवी की जन्मभूमि विदिशा से तीन मील दूर दक्षिण पूर्व में भोजपुर और नौ मील पर स्थित अधेर के स्तूपो की निशानी भुलाई नही जा सकती। इस तरह अनेक स्मृति चिह्न एव गौरव गाथायें मालव प्रदेश के अतीत को जगमगा रही हैं।

पुरातत्व एव ऐतिहासिक खोजो से आशा है कि मालवा पुन अपने स्वर्णिम अतीत को वर्तमान बनायेगा, और महाकारुणिक के मगलमय उपदेशो का पालन जन-जन का जीवन धन्य हो जायेगा।

अचल में, नर्मदा तट के माहेश्वर में, धमनार, तुम्ववन की गुफाओ में तथा सांची के गौरवशाली स्तूप के समीपस्थ सांची से दक्षिण की ओर ६ मील पर सोनेरी, सोनेरी से ६ मील पर सतधारा, से स्तूप व विहारो के भग्नावशेष मालव प्रदेश की धर्म भावना के प्रतीक बन कर करुणाकलित भावनाओ की ओर प्रेरणा दे रहे हैं। महारानी देवी की जन्मभूमि विदिशा से तीन मील दूर दक्षिण पूर्व में भोजपुर और नौ मीलें पर स्थित अधेर के स्तूपो की निशानी भुलाई नही जा सकती। इस तरह अनेक स्मृति चिह्न एव गौरव गाथायें मालव प्रदेश के अतीत को जगमगा रही है।

पुरातत्व एव ऐतिहासिक खोजो से आशा है कि मालवा पुन अपने स्वर्णिम अतीत को वर्तमान बनायेगा, और महाकारुणिक के मगलमय उपदेशो का पालन जन-जन का जीवन धन्य हो जायेगा।

# मालवा के बौद्ध साहित्यक

चपल चम्बल, विमला वेत्रवती, शीतल शिप्रा और निर्मल नर्मदा (रेवा) के पुलिन प्रदेश स्थित महामालव की धरा, जिसने करुणा मैत्री के प्रतीक चिर कल्याणमय त्रिरत्न की अर्चना कर स्वयं को धन्य माना, उस मालव की निधि अवन्तिका के शासक अशोक सम्राट देवानाप्रिय के स्वर्णिम युग में बौद्ध धर्म ने पूर्ण विकास प्राप्त कर विश्व को शान्ति का अभिनव सन्देश दिया और वेत्रवती तटवर्ती प्रदेश की पुत्री देवी ने सम्राट देवानाप्रिय की हृदयेश्वरी ने अपने अचलधन महामहेन्द्र एव पुत्री सघमित्रा को जिन की शरण में अर्पित कर दिया था।

धवल स्फटिक एव कचन महलोमयी शोभा-शालिनी मालव धरा शरच्चन्द्र की धवल माधुर्यमयी चांदनी बरसा कर चन्दा का दीप लिये शत-शत पुष्पो की अजलि ले, विश्व देवता की (पूजा) अर्चना करती है। इसने साहित्य द्वारा भी धर्म की विद्वतापूर्ण आराधना की, यह गर्व का विषय है, साथ ही सम्मानपूर्ण भी।

भगवान् तथागत के समय में अवन्तिका के नरेश चण्ड प्रद्योत के पुरोहित महाकात्यायन अथवा महाकच्चायन तथागत की शरण में गये और त्रिरत्न की मंगलमयी आभा से सम्मुख नत हो गये। जन-जन की सेवा और धर्म का प्रचार जीवन का लक्ष्य बन गया। जन-जन की समानता के हेतु जाति-भेद की विडम्बना को दूर करने के लिये मालव-नरेश से हुई उनकी प्रभाव-शालिनी वार्ता आज भी

माधुरिय सुत्त के नाम से विख्यात है। मालव के कण-गण को कल्याणकारी उपदेशो से अनुरजित करने वाले विद्वान का नाम आज भी साहित्य में सम्मानपूर्वक लिया जाता है।

पति की योग्य पत्नी भद्रा ने भी उज्जयिनी के विहार में (जिसे महाराज प्रद्योत ने निर्माण करवाया था) काषाय धारण कर शेष जीवन धर्मप्रचारार्थ अर्पित कर दिया था। यद्यपि अब इनका साहित्य समय के परिवर्तनो से अप्राप्य-सा हो रहा है, किन्तु ये बौद्ध साहित्याकाश में सदैव देदीप्यमान रहेंगे।

फाहियान के पश्चात भारत आने वाले श्रद्धालु यात्रियो ने महाकात्यायन की अर्चना स्थली महामालव की यात्रा को विस्मृत नही किया। वि० स० ११८ में ह्युयेनसाग, तत्पाश्चात् कोरियन सर्वज्ञान देव (सुऐन) आदि यहाँ आते रहे। महाराज शालिवाहन के समय में चीन त्रिरत्न की शरण में जा चुका था, मालव वासियो ने भी अनेकानेक कष्ट सह कर दुर्गम स्थली में प्रवास करते सुदूर में जा बौद्ध साहित्य के भडार को पूर्ण करने में योग दिया, तथा चीन और जापान को भारतीय सस्कृति से प्रभावित किया। जिसकी अमिट छाप आज भी जापानी नाट्य साहित्य में अकित है।

महाकात्यायन के पश्चात् यहाँ धार्मिक साहित्याकाश में काश्यप मातग का उदय हुआ इस मालववासी श्रमण ने वि० स० १२४ में चीन पहुँच कर लोयान नामक मठ में अपनी साधना का दीप प्रज्वलित किया। उन्होने एकान्त साधना, धर्म भावना से सुत ग्रन्थ का चीनी भाषा में भाषान्तर किया और यही उक्त भाषा में मगलमय उपदेशो का प्रचार करते शेष जीवन अर्पित कर दिया।

काश्यप मातंग की शुभ यात्रा के कुछ काल पश्चात् श्रमण धर्मरत्न चीन गये। वहाँ काश्यप मातंग के साथ ४२ परिच्छेद के सूत्रों को चीनी भाषा में अनूदित किया। ये उक्त भाषा का गहन अध्ययन कर चीनवासियों में इतने हिलमिल गये कि वे इन्हें "कू फा लान" के नाम से आदरपूर्वक पुकारने लगे। इन्होंने स्वतंत्र रूप से भी अन्य बौद्ध धार्मिक ग्रंथों को चीनी भाषा में भाषान्तरित किया।

विद्वानवर गुण भद्र ७८ ग्रंथों के पुष्पों की अंजलि का उपहार सुदूर चीन को दिये जिनके मृदु सौरभ में करुणा, मैत्री और शान्ति का सन्देश था। इन श्रमण ने कितने संकट पूर्ण कानन, वीथियों को पार कर महान श्रमपूर्वक ७८ ग्रंथ रत्नों को चीनी भाषा में भाषान्तर का अनुपम भेंट प्रदान किया।

धर्मज्ञान वहाँ अमितायुष के नाम से अनेकानेक ग्रंथों का अनुवाद कर साहित्य श्री को सुषमाशालिनी बनाते हुये धर्मप्रचार कर चीन में रह भारतीय गौरवगरिमा की मंजुल मूर्ति बने।

तत्पश्चात् संघभद्र, गुणवृद्धि, धर्मपति एवं उपशून्य साहित्य के जगमगाते नक्षत्र हैं। विद्वान उपशून्य मालव के एक राजकुमार थे, जो वैभव को त्याग कर चीन गये। वे ई [illegible] की राजधानी नानकिंग में भ्रमण करते, पावन शान्तिप्रद धर्म संदेश को प्रसारित करते हुए इन्होंने चीन की सेवा की और पाँच ग्रन्थ रत्नों को चीनी में अनुवाद कर चीनी जनता को मनोरम एवं सु[illegible] उपहार प्रदान किया। चीन की राजधानी नानकिंग जा धर्म[illegible] ने १० ग्रन्थों का और विद्वान रत्नमति ने तीन ग्रन्थों का चीनी भाषा में भाषान्तर किया।

माधुरिय सुत्त के नाम से विख्यात है। मालव के कण-गण को कल्याणकारी उपदेशो से अनुरजित करने वाले विद्वान का नाम आज भी साहित्य में सम्मानपूर्वक लिया जाता है।

पति की योग्य पत्नी भद्रा ने भी उज्जयिनी के विहार में (जिसे महाराज प्रद्योत ने निर्माण करवाया था) काषाय धारण कर शेष जीवन धर्मप्रचारार्थ अर्पित कर दिया था। यद्यपि अब इनका साहित्य समय के परिवर्तनो से अप्राप्य-सा हो रहा है, किन्तु ये बौद्ध साहित्याकाश में सदैव देदीप्यमान रहेंगे।

फाहियान के पश्चात भारत आने वाले श्रद्धालु यात्रियो ने महाकात्यायन की अर्चना स्थली महामालव की यात्रा को विस्मृत नही किया। वि० स० ११८ मे हुयेनसाग, तत्पाश्चात् कोरियन सर्वज्ञान देव (सुऐन) आदि यहाँ आते रहे। महाराज शालिवाहन के समय में चीन त्रिरत्न की शरण में जा चुका था, मालव वासियो ने भी अनेकानेक कष्ट सह कर दुर्गम स्थली में प्रवास करते सुदूर में जा बौद्ध साहित्य के भडार को पूर्ण करने में योग दिया, तथा चीन और जापान को भारतीय सस्कृति से प्रभावित किया। जिसकी अमिट छाप आज भी जापानी नाट्य साहित्य में अकित है।

महाकात्यायन के पश्चात् यहाँ धार्मिक साहित्याकाश में काश्यप मातग का उदय हुआ इस मालववासी श्रमण ने वि० स० १२४ में चीन पहुँच कर लोयान नामक मठ में अपनी साधना का दीप प्रज्वलित किया। उन्होने एकान्त साधना, धर्म भावना से सुत ग्रन्थ का चीनी भाषा में भाषान्तर किया और यही उक्त भाषा में मगलमय उपदेशो का प्रचार करते शेष जीवन अर्पित कर दिया।

काश्यप मातंग की शुभ यात्रा के कुछ काल पश्चात् श्रमण धर्मरत्न चीन गये। वहाँ काश्यप मातंग के साथ ४२ परिच्छेद के सूत्रों को चीनी भाषा में अनूदित किया। ये उक्त भाषा का गहन अध्ययन कर चीनवासियों में इतने हिलमिल गये कि वे इन्हें "फू फा लान" के नाम से आदरपूर्वक पुकारने लगे। इन्होंने स्वतंत्र रूप से भी अन्य बौद्ध धार्मिक ग्रंथों को चीनी भाषा में भाषान्तरित किया।

विद्वद्वर गुण भद्र ७८ ग्रंथों के पुष्पों की अंजलि का उपहार सुदूर चीन को दिये जिनके मृदु सौरभ से करुणा, मैत्री और शान्ति का सन्देश था। इन श्रमण ने कितने संकट पूर्ण कानन, वीथियों को पार कर महान श्रमपूर्वक ७८ ग्रंथ रत्नों को चीनी भाषा में भाषान्तर कर अनुपम भेंट प्रदान किया।

धर्मज्ञान यहाँ अमितायुष के नाम से अनेकानेक ग्रंथों का अनुवाद कर साहित्य श्री को सुषमाशालिनी बनाते हुये धर्मप्रचार कर चीन में यह भारतीय गौरवगरिमा की मजबूत कड़ी बने।

तत्पश्चात् संघभद्र, गुणवृद्धि, धर्मपति एवं उपशून्य साहित्य के जगमगाते नक्षत्र हैं। विद्वान उपशून्य मालव के एक राजकुमार थे, जो वैभव को त्याग कर चीन गये। ये ६ [illegible] की राजधानी नानकिंग में भ्रमण करते, पावन शान्तिमय धर्म सन्देशों को प्रसारित करते हुए इन्होंने चीन की सेवा की और पाँच ग्रन्थ रत्नों की चीनी में अनुवाद कर चीनी जनता को मनोरम एवं शुभ उपहार प्रदान किया। चीन की राजधानी नानकिंग जा श्रमण परमार्थ ने १० ग्रन्थों का और विज्ञान रत्नमति ने तीन ग्रन्थों का चीनी भाषा में भाषान्तर किया।

विद्वान अतिगुप्त और श्रमण पुण्योपाप को भी नही भुलाया जा सकता। अतिगुप्त ने एक सुन्दर ग्रन्थ का अनुवाद किया और श्रमण पुण्योपाप ने डेढ सौ ग्रन्थ रत्न चीन पहुँचाये। चीनी भाषा में मौलिक एव अनुवादित ग्रथो को निर्मित कर ये कीर्ति विस्तार में योग दिये। साथ ही तत्कालीन सम्राट द्वारा अति सम्मानित हुये।

नरेन्द्रयश, प्रमिति एव धर्मरुचि नामक मालववासी विद्वानो ने भी चीन जा, परिश्रम पूर्वक वहा की भाषा का अध्ययन कर एव कतिपय ग्रन्थो का चीनी मे अनुवाद कर करुणा मैत्री की ललित कलित भावनाओ से उक्त प्रदेश को अभिनव शान्ति में विभोर कर दिया।

समस्त भारत मालव, मद्रास, कोशल आदि से जितने बौद्ध विद्वान साहित्याराधना द्वारा धर्म प्रचारार्थ चीन गये उनमें लगभग चौथाई प्रवासी अर्पित करने का सौभाग्य मालव को प्राप्त है।

हजारो वर्ष पूर्व कटकाकीर्ण भयावह कान्तार पथ वीथियो से दूर सुदूर जा वहाँ की भाषा का गहन, गम्भीर, अध्ययन कर उस भाषा में अमूल्य ग्रन्थ सृजन कर तथा पावन पुनीत ग्रन्थो को पालि एव सस्कृत से अनुवाद कर साहित्य की अर्चना करने वाले मालव विद्वानो का साहस, उनकी धर्म-प्रचार भावना मालव गौरव को अमरत्व प्रदान करती है।

मध्ययुग में मालव धरा इनके सुनामो को सँजोये मौन नीरव हो भविष्य की ओर निहारती रही। अब त्रिरत्नानुभाव से वह समय शीघ्र आवे कि पुन मालववासी हिन्दी में बौद्ध साहित्य की

ऐसा कर पूर्व साहित्याराधना की परम्परा में गौरवपूर्ण कड़ी जोड़ दें, और भावुक मन की यह कामना पूर्ण हो

जाग जाग री मधुर कल्पने, ले मानव गौरव आख्यान
नव गुंजित हो पुन विश्व में, करुणा-मैत्री के जय गान



# बौद्ध महिलाओं की निर्मल प्रेरणा

लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व जब भारत-भूमि दुख, शोक, निर्ममता, विवशता अत्याचार की ज्वालामुखियो के निश्वाश में झुलस रही थी, तभी हिमालय के अचल में हिमकिरीटिनी की आशाओ के प्रतीक ने उत्तराखड की पावन वन्य स्थली लुम्बिनी में माया रानी के नव-जात शिशु के रूप में जन्म धारण किया। प्रकृति मुस्करा उठी पूर्णिमा की निशारानी ने चन्दा का दीप सँजोकर आरती उतारी। समय के साथ साथ अनेक घटनायें हुई। विश्व के दुखो से दुखी होकर उन्होंने अपनी रूपराशि अर्धांगिनी गोपा, नवजात शिशु राहुल और अनन्त वैभव का परित्याग कर दिया। उरुवेला के पावन अचल प्रदेश में निरजना के पुलिन उन्होंने मार विजय किया। वह दिव्य घडी भी आई जब उन्हें बुद्धत्व प्राप्त हुआ और दुख की निविडतम रजनी बीत गई। उन जननायक की कल्याणी वाणी गहन सुनील अम्बर में, धरा पर गूज उठी। सागर की फेनिल उर्मिल तरगें उसे प्रतिध्वनित कर धन्य हो गई। यज्ञो में मूक पशुओ का बलिदान, कातर चीत्कार स्थगित होने लगा।

मूक-प्राणी की तरह सुकोमला सरला पीडिता नारियो ने उनके जीवन-काल में ही त्रिरत्न की शरण में आश्रय चाहा। महाकारुणिक की करुणा द्रवित हो उठी, और महादेवी प्रजापति, त्याग सहिष्णुता की पावन प्रतीक देवी गोपा (यशोधरा) सहित

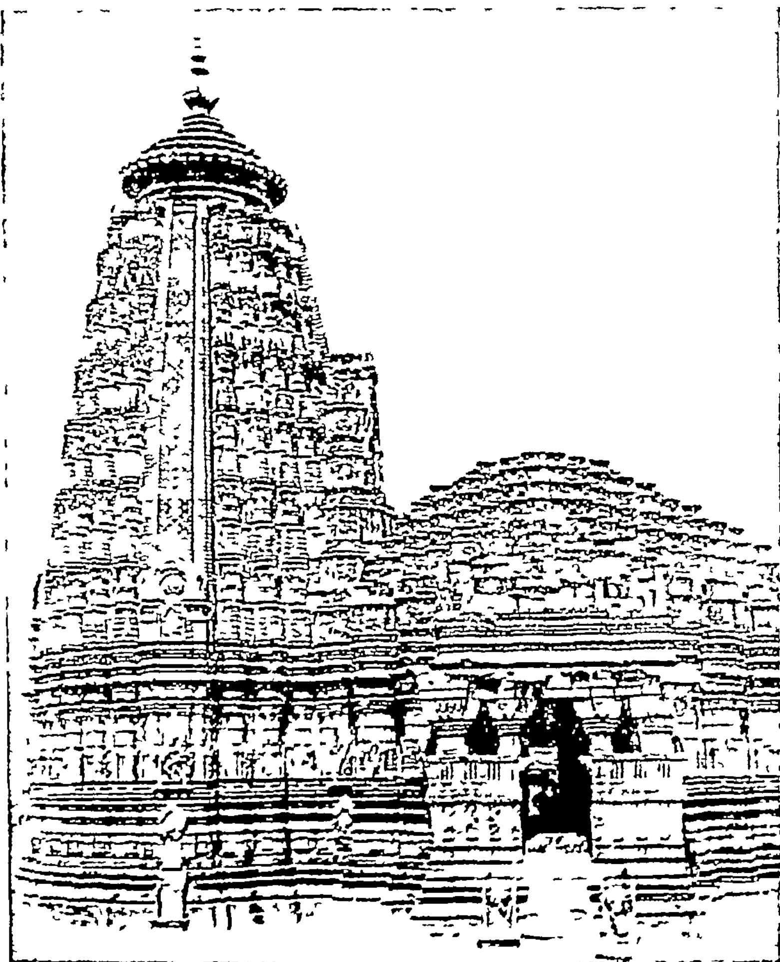
पाकर ललनाओं ने हंसते हंसते त्यागमय जीवन को स्वीकार कर लिया। राज प्रासादों की रमणियाँ, कृषकों की नारियाँ सभी समान थीं, समान था उनका रहन-सहन, और समान ही थी उनकी दिनचर्या एवं समान रूप से ही था उपदेश श्रवण। उन नारियों ने भगवान के श्री चरणों के समीप रहकर विश्व को दिखा दिया कि नारी भी पुरुषों की तरह साधना कर सत्य का अनुसरण करती हुई मोक्ष प्राप्त कर सकती है। केवल पुण्यमयी काषाय परिधानों सोभिता भिक्षुणियाँ ही नहीं गृहस्थ नारियों ने भी उन सत्यमय उपदेशों को ग्रहण कर समता स्नेह एवं प्राणि मात्र के प्रति करुणा की ललित भावनाओं द्वारा कितने ही युद्ध और विरोध से मानवों की रक्षा की। सम्राट बिम्बसार की पत्नी महादेवी वासवी, सर्वस्व दान करने वाली करुणामयी आम्रपाली, अवन्तिका की पद्मा आदि अनेक नारियों निज गृह में निवास करती हुई अनुपम त्याग एवं सेवा का आदर्श भावी नारी के लिये अर्पित कर दी।

बौद्ध संस्कृति का वह स्वर्ण-युग था। जब कलिंग विजय के पश्चात् सम्राट अशोक देवानांप्रिय के रूप में भिक्षु की शरण में आ शान्ति लाभ और मानव के हृदय पर विजय प्राप्त किये थे। तब भी बौद्ध युग की नारी आगे ही रहती रही। उनकी प्रिया पत्नी 'देवी' ने अपने लालों में सारे पुत्र-पुत्री का धर्म के प्रचार में समर्पित कर दिया था। साँची, विदिशा, सोनेरी, खण्डगिरि, [illegible] गुफाओं के अनेकानेक स्तूप शिखर शिला पत्थर आदि पाषाण में अद्भुत [illegible] मूर्तियाँ थीं। [illegible] [illegible] [illegible] की [illegible] स्थापना की। ऐसे पुनीत संस्कृति में [illegible] [illegible]

# परिशिष्ट

# राजपूत-कालीन शिल्प-सौंदर्य

बौद्ध कला-कृतियाँ—



उदयपुर का उदयेश्वर-मन्दिर

# राजपूत-कालीन शिल्प-सौंदर्य

वीणा से विश्व-विमुग्ध करनेवाली वासवदत्ता के पिता अवन्ति नरेश सम्राट चंड प्रद्योत एवं विदिशा-कुमारी-देवी के हृदयेश्वर सम्राट देवानांप्रिय अशोक के स्वर्णिम युग में मालव की शस्य श्यामला धरा पर विमला-वेत्रवती, चचल-चर्मण्वती, निर्मल-रेवा, शीतल-शिप्रा

मोटर स्टैण्ड से दुर्ग जाने के लिये पहले महाराज दौलतराव का विजय स्तम्भ मिलता है, फिर पर्वत की चढाई पडती है। दुर्ग के मुख्य द्वार तक३६८ सीढियाँ चढकर चार सौ फीट की ऊँचाई पर पहुच जाते हैं। किले के लाल पत्थरो के पन्द्रह फीट चौड परकोटे (सीमा प्राचीर) से तीन द्वार पार कर चौथे द्वार तक पहुँचते हैं। जो हवापोर के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें काठ के वडे फाटक पर नौ इच लम्वी नोकदार कीलें जडी हुई हैं। इस द्वार पर सदैव श्रम हारिणी सुशीतल स्वच्छ वायु आती रहती है।

हवापोर से कचहरी महल जाते समय १४×१६ फीट लम्वी चौडी तीन फीट गहरी अरुण पाषाण की सीप दर्शनीय है। इसमें सुन्दर शिल्पाकन भी है। यह कभी राज रमणियो के स्नानार्थ प्रयोग किया जाता रहा होगा। ऐसा प्रतीत होता हैं।

कुछ पुराने भवनो को पार कर वीर ऊदल की प्रणयिनी परिणीता नरवर राजनन्दिनी फूलकुमारी का महल है। जिसे हलहल महल कहते हैं। यह सुन्दर अलिन्द पर निर्मित वारहदरी सी है। इसके दक्षिण की ओर के प्रस्तर स्तम्भ हिलते थे। अलिन्द के दोनो पार्श्व में वैठने के लिये स्थान गैलरियाँ बने हैं। मध्य में दो स्तम्भो से सहारे एक झूला बना है। यहाँ से दिखाई देती काली सिन्ध नदी का दुर्ग को पश्चिम से पूर्व की ओर घेरती हुई धवल धारा मनोरम प्रतीत होती है।

पास ही दो मजिला कचहरी महल है। जिसका ऊपरी मजिल विश्राम गृह की भाँति है। जहाँ यात्री गण ठहरते हैं। इसके दक्षिण में तीन महल हैं। मध्य में शीशे से जटित सुन्दर कक्ष है। जहाँ

मोटर स्टैण्ड से दुर्ग जाने के लिये पहले महाराज दौलतराव का विजय स्तम्भ मिलता है, फिर पर्वत की चढाई पडती है। दुर्ग के मुख्य द्वार तक३९८ सीढियाँ चढकर चार सौ फीट की ऊँचाई पर पहुच जाते है। किले के लाल पत्थरो के पन्द्रह फीट चौड परकोटे (सीमा प्राचीर) से तीन द्वार पार कर चौथे द्वार तक पहुँचते हैं। जो हवापोर के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें काठ के वडे फाटक पर नौ इच लम्बी नोकदार कीलें जडी हुई है। इस द्वार पर सदैव श्रम हारिणी सुशीतल स्वच्छ वायु आती रहती है।

हवापोर से कचहरी महल जाते समय १४×१६ फीट लम्बी चौडी तीन फीट गहरी अरुण पाषाण की सीप दर्शनीय है। इसमें सुन्दर शिल्पाकन भी है। यह कभी राज रमणियों के स्नानार्थ प्रयोग किया जाता रहा होगा। ऐसा प्रतीत होता हैं।

कुछ पुराने भवनो को पार कर वीर ऊदल की प्रणयिनी परिणीता नरवर राजनन्दिनी फूलकुमारी का महल है। जिसे हलहल महल कहते है। यह सुन्दर अलिन्द पर निर्मित बारहदरी सी है। इसके दक्षिण की ओर के प्रस्तर स्तम्भ हिलते थे। अलिन्द के दोनो पार्श्व में वैठने के लिये स्थान गेलरियाँ वने है। मध्य में दो स्तम्भो से सहारे एक झूला वना है। यहाँ से दिखाई देती काली सिन्ध नदी का दुर्ग को पश्चिम से पूर्व की ओर घेरती हुई धवल धारा मनोरम प्रतीत होती है।

पास ही दो मजिला कचहरी महल है। जिसका ऊपरी मजिल विश्राम गृह की भाँति है। जहाँ यात्री गण ठहरते हैं। इसके दक्षिण में तीन महल है। मध्य में शीशे से जटित सुन्दर कक्ष है। जहाँ

दर्शक को अपने असख्य प्रतिविम्ब दृष्टिगोचर होते है। प्रतीची की ओर स्वर्णमेहल है जीर्ण शीर्ण दशा में भी इसमें कही कही स्वर्णिम रेखायें विगत वैभव का याद दिलाती है।

इसके अतिरिक्त अनन्त जलराशि मय कटोरा ताल, अष्टभुजा महिपवाहिनी देवी (चौदह फीट लम्बे भैंसे पर विराजी हुई है) की प्रतिमा, नृत्य से नरवर जीतने की आकाक्षा रखने वाली तरुणी नृत्यागना रज्जुनर्तकी की समाधि (किले के पश्चिम भाग से) सती रेवा परेवा की समाधि, खलील खाँ का मकवरा भी दर्शनीय है। नल-दमयती, फूलकुमारी-ऊदल, ढोला-मारु, रज्जुनर्तकी की कथाओ को संजोये नरवर दुर्ग प्राचीन वैभव से युक्त है। समीप ही शिवपुरी की रम्य प्रकृति मुग्ध कारिणी है। साथ ही सख्या सागर, महाराज माधवराव शिन्दे की छतरी समाधि आधुनिकता से रजित है। मन् सत्तावन के स्वातत्र्य युद्ध के महान वीर तात्या टोपे की समाधि भी यही शिवपुरी में है।

## धारानगरी

राजपूत काल की सुन्दर कला-कृतियां विख्यात नरेश भोज और गणितज्ञा लीलावती की गौरवमयी गाथा को लिये धारानगरी यात्रियो के आकर्पण का केन्द्र वनी हुई है। देवी कालिका का मदिर धारेश्वर की आराध्य देवी सरस्वती का मदिर, किला, भोजशाला तथा कमलपुष्प-पत्रों से सुशोभित विशाल सरोवर और अन्य ध्वसावशेप तत्कालीन शिल्प सौन्दर्य तथा भवन आदि निर्माण कला की अनुपम निधियां है।



ग्वालियर का तेली-मन्दिर

की रानी लक्ष्मी देवी की समाधि गौरव के साथ उनकी कथाओं की सु-स्मृति को दिला रही है।

यहाँ का संग्रहालय भी दर्शनीय है। बाग की गुफा से प्राप्त शिल्पकला की बौद्ध कालीन अनुपम निधियाँ जिन्हें अन्य राष्ट्रों के दर्शक भी देखकर विस्मय-विमुग्ध हो जाते हैं, यहाँ सजाकर रखी गई हैं।

आधुनिक भवन-निर्माण कला के दर्शनीय स्थानों में मोती महल, जल-विहार महल, ऊषा-महल आदि सुन्दर स्थान हैं।

## चंदेरी

मध्य-भारत के गुना जिले में गुना से बस द्वारा चदेरी जाते हैं। शिशुपाल की यह विख्यात नगरी, सुन्दर दुर्ग, एव कितनी बावलियो से सुशोभित है। राजपूत कला के साथ मुगल स्थापत्य कला के सुन्दर नमूने बादल द्वार, किला आदि सुन्दर हैं ही। बाबर की चढाई के समय जौहर ताल के समीप तत्कालीन चदेली नरेश मेदनीराय की प्रधान राजमहिषी ने कितनी ही सुकुमारी राजरमणियो के साथ सतीत्व रक्षार्थ जौहर किया था। वह स्थान भी करुण कथा को लिये उन वीराङ्गनाओ की याद दिला रहा है।

## अन्यान्य

विदिशा के समीप वरेठ स्टेशन से चार मील दूरी पर नील कठेश्वर का सुन्दर मदिर जिसके स्तम्भो और प्राचीरो पर मजुल कलात्मक मूर्तियाँ निर्मित हैं, सुन्दर मनोरम बेल लतायें अकित है। उदयपुर के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है। एक सरोवर भी दर्शनीय है। तत्कालीन वेश विन्यास पूर्ण सूक्ष्म सुन्दर अकनमयी मूर्तियाँ, उक्त काल की सस्कृति को साकार कर रही है। इस मदिर में यह विशेषता है कि प्रात कालीन किरणें प्रथम ही देव मूर्ति के समीप आलोक बिखेरती है।

ग्वालियर का सुदृढ दुर्ग दर्शनीय है। मानमन्दिर, सास बहू (सहस्त्रावाहु) का मदिर, सगीत की रानी राजा मानसिंह की राज-महिषी कृपक कुमारी मृगनयनी का गूजरी महल, सगीत के सफल साधक तानसेन, भारतीय स्वातव्य युद्ध की प्रथम आराधिका झाँसी

# मुस्लिम युग की ऐतिहासिक स्थलियाँ

बाज बहादुर वीर नृपति थे, रुपमती थी रानी।
आज अमर वह प्रिय प्रियतम की, परिणयमयी कहानी।

× × ×

जूझी थी तलवारो पर, जिनकी अलमस्त जवानी।

मुस्लिम युग की सुन्दर कलाकृतियाँ-भवन, मकबरे, उद्यान, प्रासाद एव मसजिदो के रूप में (यवन-कला से पूर्ण वनी) निर्माता शासको की कथायें दुहरा रही हैं। इन्ही में सारगपुर और माडव ऐतिहासिक नगरो में अपना स्वतत्र स्थान रखते हैं। मालव की स्वर-किन्नरी रूपरानी, गन्धर्व कन्या रूपमती और उसके प्रणयी बाज बहादुर की प्रणय कथा मानो सारगपुर और माडव में साकार हो रही है।

मध्य-भारत की ग्रीष्मकालीन राजधानी इदौर से अस्सी मील पर तथा देवास से सत्तावन मील पर यह स्थान सारगपुर स्थित है। उक्त स्थानो में बस द्वारा वहाँ पहुँचा जाता है। भोपाल-उज्जैनी रेलवे के मक्सी स्टेशन से तीस मील बस द्वारा जाने पर भी सारगपुर पहुँच जाते हैं।

सतीत्व रक्षा के हेतु प्राणो का वलिदान करने वाली रूप-लतिका रूपमती इसी सारगपुर की गधर्व कन्या थी। सारगपुर को १२९८ ई० में सारगसिह नामक क्षत्रिय वीर ने बसाया था। मुस्लिम युग में यह नगर अपने पूर्ण वैभव को प्राप्त हुआ। यहाँ के हिन्दू शासक गोगादेव को सन् १३०५ में अलाउद्दीन खिलजी के किसी सिपह-



चन्देरी का बादल महल दरवाज़ा

सालार ने पराजित किया था। कालान्तर में चित्तौड नरेश कुम्भा ने यवन शासक मुहम्मद खिलजी को पराजित किया था। मध्ययुग में दिल्ली की सत्ता के डगमगाने पर यवन सरदार शुजावल खाँ माडव के स्वतत्र सुलतान वन गये। जो माडव दुर्ग को छोडकर अधिकाश रूप में सारगपुर में रहते थे। इन्ही के पुत्र मृगया प्रेमी, कलाप्रिय वाजवहादुर ने सारगपुर के शिवमदिर में रूपराशि रूपमती को सगीत की साधना करते देखा। प्रतिभाशालिनी सगीतज्ञा के रूप पर वे मुग्ध हो गये। जाति धर्म के वीच प्रणय जीत गया और सारगपुर की स्वरकिन्नरी की रूपज्योति से मान्डव दुर्ग के राजप्रासाद जगमगा उठे।

काली सिन्धु नदी की चमकती धारा के पूर्व पुलिन पर स्थित सारगपुर आज भी सौन्दर्यशाली रूप और यवनकालीन भवन निर्माण कला की स्मृति दिला रहे हैं।

**सारगपुर का सुन्दर शिवमदिर**—जिसके प्रागण में रूप सगीत की साधना करती थी—ग्राम की उत्तर पूर्व सीमा पर विद्यमान है।

**रूपमती का गुम्वद**—माडव की राजमहिषी रूप आदम खाँ के माडव पर आक्रमण के समय वाजवहादुर के पलायन से वन्दिनी हो गई थी, तव यही आदमखाँ से सतीत्व रक्षार्थ अपने प्रिय की याद ले विषपान कर नश्वर शरीर को त्याग दिया था। गुम्वद आज भी ध्वस अवस्था में चारो ओर चार द्वार एव सुन्दर अलिन्द के साथ आकर्षक प्रतीत होता है।

इसके समीप ही सात आठ गुम्वदो में एक पहलवान का गुम्वद कहलाता है। जिसका द्वार दक्षिण की ओर है। शिला लेख से

विदित होता है कि गयासुद्दीन खिलजी के समय में शाला-भवन के हेतु इसका निर्माण हुआ था।

काली सिन्ध के कगार के समीप ही मुसलमान शिल्प-शैली की झलक लिये छनिहारी पनिहारी की गुम्वद है। छनिहारी नामक घोप जाति की स्त्री ने गरीबी में भी कठिन परिश्रम की कमाई को अपनी समाधि बनवाने के लिये धन एकत्रित किया था। उसके इच्छा-नुसार उक्त गुम्वद बनाया गया। इसी प्रकार पनिहारी नाम की भिस्ती जाति की स्त्री की कहानी है।

पीर मुसमखां, सय्यद चांद, पीर मिट्ठन
गुम्वद भग्न प्राय होते हुये यवन शिल्प कला
प्रागण के साथ शोभित हैं। इनके अति
भट्ठी नामक स्थान, लाल हाजिरा, और
इमारत है। भट्ठी का ७०×६० फीट
द्वार, स्तम्भ, जालीदार वातायन, मेहराव
तथा स्थापत्य कला की मजुल निधियाँ

मोलह स्तम्भो पर आधारित
मसजिद की सुदृढ प्राचीरें भी दर्शन

सारगपुर में हिन्दू शासक भी
वर्ष पूर्व देवास नरेश द्वारा
कपिलेश्वर का मन्दिर, तट प
आकर्षक हैं। यह नगर अति
था। कहा जाता है यहाँ

विदित होता है कि गयासुद्दीन खिलजी के समय में शाला-भवन के हेतु इसका निर्माण हुआ था।

काली सिन्ध के कगार के समीप ही मुसलमान शिल्प-शैली की झलक लिये छनिहारी पनिहारी की गुम्बद है। छनिहारी नामक घोष जाति की स्त्री ने गरीबी में भी कठिन परिश्रम की कमाई को अपनी समाधि बनवाने के लिये धन एकत्रित किया था। उसके इच्छा-नुसार उक्त गुम्बद बनाया गया। इसी प्रकार पनिहारी नाम की भिस्ती जाति की स्त्री की कहानी है।

पीर मुसमखाँ, सय्यद चाँद, पीर मिट्ठन शा, पीर ढोकले के गुम्वद भग्न प्राय होते हुये यवन शिल्प कला की सुन्दर मेहरावें, प्रागण के साथ शोभित है। इनके अतिरिक्त पीर मैमन खाँ की भट्ठी नामक स्थान, लाल हाजिरा, और जामा मसजिद मनोरम इमारत है। भट्ठी का ७०×९० फीट का प्रागण, तिमजिला भव्य द्वार, स्तम्भ, जालीदार वातायन, मेहराव एव अलिन्द भवन निर्माण तथा स्थापत्य कला की मजुल निधियाँ है।

सोलह स्तम्भो पर आधारित लाल हाजिरा का गुम्वद, जामा-मसजिद की सुदृढ प्राचीरें भी दर्शनीय है।

सारगपुर में हिन्दू शासक भी बहुत समय तक रहे। दो सौ वर्ष पूर्व देवास नरेश द्वारा निर्मित काली सिन्ध के मध्य स्थित कपिलेश्वर का मन्दिर, तट पर बने देवी तथा मारुति के मदिर आकर्पक हैं। यह नगर अति महीन साडियो के लिये भी विख्यात था। कहा जाता है यहाँ की सुन्दर साडियाँ इतनी बारीक होती

थी कि आम्रफल की जाली (जिसके भीतर गुठली रहती है) में भरी जा सकती थी।

माडव —रूप सुन्दरी रूपमती माडव की राजमहिषी के रूप में जब माडव के प्रासाद को सौंदर्य तथा सगीत से विभूषित एव सुगु-जित की, तब प्रणयी बाजबहादुर ने अपने भाग्य को सराहा। रूप हिन्दू थी अत रेवा (नर्मदा) पर बडी श्रद्धा रखती थी। नित्य रेवा दर्शन कर उसे बडी प्रसन्नता होती थी। सुलतान ने अपनी परिणीता प्रणयिनी के लिये रेवा दर्शन महल नामक एक ऊँचे भवन का निर्माण करवाया। जहाँ से नित्य रेवा का दर्शन व अर्चन करती थी। तत्पश्चात् जहाज महल, हिन्डोला महल, एव अशर्फी महल नामक कलात्मक प्रासाद रानी रूपमती के लिये निर्मित हुये। बाज बहादुर महल तथा रूपमती महल भी दर्शनीय हैं। रेवा कुन्ड और नीलकठ के अतिरिक्त जामामसजिद होशगशाह का मकबरा तथा मुहम्मद खिलजी का मकबरा है, इनके सुन्दर स्तम्भ, कगूरे, द्वार, गुम्वद, मेहरावें मुस्लिम कला की ,अनुपम वस्तुयें हैं। रूपमती महल के समीप का जलाशय सगीत की रानी रूप की उन स्मृति को सजीव कर देता है। जब बाजबहादुर अन्य बेगमो के समीप होते तो स्वर किन्नरी रूप मन बहलाने के लिये सितार के पतले तारो पर विहाग के स्वर छेड देती थी कम्पित समीर की लहरियो से सदेश पा सगीत की राग-रागिनियो से उसका उत्तर में बाजबहादुर प्रणयिनी के समीप आ जाते थे। भूप-कल्याण राग की निर्मातृ रूप ही मानी जाती है। इसी प्रकार इसके कला प्रिय हृदयेश्वर बाज बहादुर ने ख्याल बाजखानी तर्ज निकाला था।

रूप की सजीव प्रतिमा कलामयी रूपमती, गुणवती होने के साथ भारतीय नारीत्व का उज्ज्वल रत्न थी जिसने अपने सतीत्व रक्षार्थ विषपान कर लिया था।

आज न प्रणयिनी रूप है न उसके प्रिय बाजबहादुर, किन्तु सुषमा शाली प्रकृति के बीच धार से २२ मील दक्षिण में अवस्थित माडव दुर्ग के प्रासाद आतप वर्षा सहते मधुर प्रेम कथा की स्मृति को साकार कर रहे हैं। यह माडव वीर आल्हा ऊदल की उस स्मृति को जागृत कर देता है। जिन्होंने अपने पिता के वध का बदला लेने के लिये तत्कालीन नरेश को परास्त कर मरवा डाला था और माडव को ध्वस कर दिया था।

माडव दुर्ग की प्राकृतिक सुषमा, प्रासादो, वन-वृक्षो, तरु-लतिकाओ तृण-वीरुधो में मानो रूपरानी की मधुर प्रणय कथा एव वलिदान निखर रहा है जिन्हें याद कर भावुक मन एक कसक के साथ गुन-गुना उठता है

रूपा के महलो में सोई, मुस्लिम युग की याद।<br>
माडव दुर्ग मौन हो जैसे, करता हो फरियाद।<br>
जहाँ कभी सगीत निगुजन, था अनुपम उल्लास।<br>
आज वने भग्नावशेष हैं, रूपमती प्रासाद।<br>
उस युग की है याद दिलाता, महल हिडोला मानी।<br>
त्याग मयी है मालव धरणी, सस्कृतियो की रानी।

